February 2023

अरफ़ात किरण

मुहब्बत व हमदर्दी की अहमियत

"इन्सान के पास सबसे अनमोल चीज़ यह है कि वह दूसरे के दर्द से मुतास्सिर होता है, उसके अन्दर मुहब्बत का माद्दा है, उसको हरकत देने वाली कोई चीज़ मिल जाए तो वह हरकत में आ जाता है, फिर न मज़हब को देखता है, न मिल्लत को, न फ़िरक़ा को, न इलाक़े को, न वतन को और न मुल्क को, बल्कि इन्सान इन्सान का दिल देखता है, उसके दर्द को महसूस करता है, जिस तरह मक़नातीस (चुम्बक) लोहे को खींचता है और वह खिंचने पर मजबूर है, उसी तरह इन्सान के दिल का मक़नातीस इन्सान के दिल को खींचता है, अगर इन्सान से यह दौलत छिन जाए तो वह दिवालिया हो जाएगा, अगर मुल्क इससे महरूम हो जाए, अगर अमरीका की दौलत, रूस का निज़ाम, अरब मोमालिक के पेट्रोल के कुवें हों, हुन बरसता हो, सोने–चांदी की गंगा–जमुना बहती हो, लेकिन इस मुल्क में मुहब्बत का चश्मा सूख चुका हो, तो वह मुल्क कंगाल है, उस मुल्क पर अल्लाह की रहमतें नाज़िल न होंगी।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

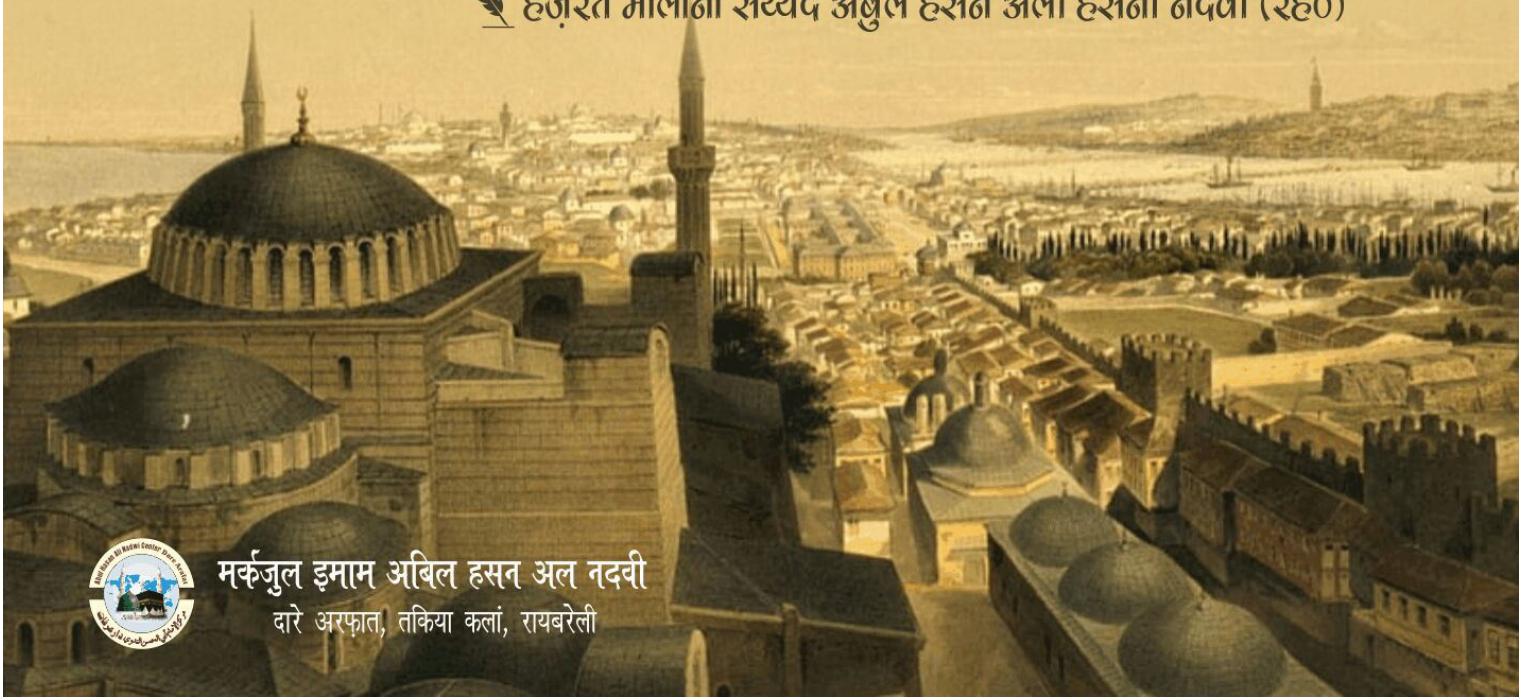

मर्कजुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

पैग़म्बराना दावत के अनासिर-ए-अरबा

"कुरआन करीम की एक–एक आयत में दावत–ए–पैग़म्बराना के उसूल बयान किए गए हैं, अल्लाह तआला का इरशाद है: "अपने रब के रास्ते की तरफ़ हिकमत और अच्छी नसीहत के ज़रिए बुलाते रहिये और अच्छे तरीक़े पर उनसे बहस कीजिए।"

इसमें दावत इलल्लाह के आदाब में सबसे पहले "बिलहिकमत" को रखा गया है, जिसका मतलब यह है कि दाई का काम सिर्फ़ एक पैग़ाम व कलाम को लोगों के कानों में डाल देना नहीं बल्कि हिकमत व तदब्बुर से मुनासिब वक़्त, मुनासिब माहौल देखकर ऐसे उनवान से पहुंचाना है कि मुख़ातिब के लिए क़ुबूल करना आसान हो जाए।

दूसरी चीज़ मोइज़त है, जिसके माने किसी हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही के साथ नेक काम की तरफ़ बुलाने के हैं, इससे मालूम हुआ कि दाई के लिए ज़रूरी है कि जो कलाम करे हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही के जज़्बे से करे।

तीसरी चीज़ मोईज़त के साथ हसना की क़ैद है, इसमें इशारा उनवान को नर्म और दिलनशीं बनाना है, क्योंकि कभी–कभी ख़ालिस हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही से किसी को उसकी भलाई की तरफ़ बुलाया जाता है, मगर उनवान और लब व लहजा ख़राश होता है, तो वह दावत भी मोअस्सिर नहीं होती, इसलिए मोइज़त के साथ हसना की क़ैद लगा दी।

हासिल यह है कि इस आयत ने दावत–ए–पैग़म्बराना के आदाब में तीन चीज़ों को ज़रूरी क़रार दिया, अव्वल हिकमत व तदब्बुर, ताकि दावत बेकार न हो जाए बल्कि मोअस्सिर हो। दूसरे हमदर्दी व ख़ैरख़्वाही से नेक काम की दावत। तीसरे इस दावत का उनवान और लब व लहजा नर्म व क़ाबिले क़ुबूल हो। आख़िर में एक चौथी चीज़ यह बतलाई की अगर दावत को इन आदाब के साथ पेश करने पर भी क़ुबूल न किया जाए और नौबत मुजादिला ही की आ जाए तो फिर आमियाना अंदाज़ का मुजादिला नहीं होना चाहिए, बल्कि अच्छे तरीक़े पर होना चाहिए, यानि इसमें अपना गुस्सा उतारना या अपने नफ़्स की बड़ाई पेश–ए–नज़र न हो, ख़ालिस अल्लाह तआला के लिए और अल्लाह के कलिमे को बुलन्द करने के लिए हो।

अम्बिया (अलैहिस्सलाम) के दावत व इस्लाह के वाक़्यात जो कुरआन हदीस में बेशुमार आए हुए हैं, इनमें से एक–एक को देखिए तो पूरी उम्र की कोशिशों को इसी अंदाज़ पर पाएंगे। हक़ीक़त यह दावत व इस्लाह का काम अम्बिया या उनके वारिस ही कर सकते हैं जो क़दम–क़दम पर अपना ख़ून पीते हैं और दुश्मन की ख़ैरख़्वाही और हमदर्दी में लगे रहते हैं। आज अफ़सोस यह है कि हम उस्वा–ए–अम्बिया (अलैहिस्सलाम) से इतनी दूर जा पड़े कि हमारे कलाम व तहरीर में उनकी किसी बात का रंग न रहा। आज हमारे उलमा व मुस्लिहीन व मुबल्लिग़ीन में कोई हज़रत मूसा व हारून (अलैहिस्सलाम) से ज़्यादा हादी और रहबर नहीं हो सकता और उनके मुख़ातिब फ़िरऔन से ज़्यादा गुमराह नहीं हो सकते, तो उनके लिए कैसे रवा हो गया कि जिससे उनका किसी राय में इख़्तिलाफ़ हो जाए तो उसकी पगड़ी उछालें और इस्तहज़ा व तमस्ख़र के साथ उस पर फ़िक़रे चुस्त करें और फिर दिल में ख़ुश हों कि हमने दीन की बड़ी ख़िदमत अंजाम दी है और लोगों से इसके मुतवक़्क़ो रहें कि हमारी ख़िदमत को सराहें और क़ुबूल करें।"

मुफ़स्सिर-ए-कुरआन अल्लामा मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी उस्मानी (रह०)

(वहदत-ए-उम्मतः 48-51)

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:2 फ़रवरी 2023 ई० वर्ष:15

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मुद्रक

मो० हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

आसान दीन

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"बेशक दीन आसान है और जो शख़्स दीन में सख़्ती अख़्तियार करेगा उस पर ग़ालिब आ जाएगा, लिहाज़ा अपने अमल में पुख़्तगी पैदा करो और म्यानारवी अख़्तियार करो और ख़ुश हो जाओ और सुबह व दोपहर और शाम और किसी क़द्र रात में (इबादत से) मदद हासिल करो।"

सही बुख़ारी: 39

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

बावज़न औसाफ़

सैय्यद अब्दुर्रब सूफ़ी (रह0)

वह शै क्या है अगर मिल गई तो मिल गया सबकुछ
वह शै है हर ज़रूरत के लिए फ़ौरन दुआ करना

दुआ में देर की उम्मीद ग़ैरों से बांधी
यह इश्राके तसर्रुफ़ में है दिल को मुब्तिला करना

अमल वह कौन है जो सबसे बढ़कर है पसंदीदा
अमल वह है नमाज़ें वक़्त पर पैहम अदा करना

वह ज़ेवर कौन ज़ेवर है जो है आंखों की आराइश
जो आराइश है आंखों की वह ज़ेवर है हया करना

वह तीन औसाफ़ यह हैं जिनसे अपना वज़न बढ़ता है
तअस्सुब छोड़ना, सच बोलना, वादा वफ़ा करना

सुबूत "लन तनालुल बिर्रा हत्ता तुनफ़िक़ू„ यह है
तबाए पर बहुत दुश्वार है जूद व सख़ा करना

अलामत जन्नती होने की है यह भी मुसलमां के
ख़ुदा के ख़ौफ़ से तन्हा में आह व बका करना

तमामी आक़िबत अंदेशों में सबसे आला है
जवानी में मुहैया दौलत सिद्क़ व सफ़ा करना

दुआए सूफ़ी नाचीज़ है इस नज़्म के हक़ में
मुअस्सिर मेरे इन शेरों को ऐ मेरे ख़ुदा करना

इस अंक में:

जदीद तालीम का बिगाड़ (संपादकीय) 3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दीनी तालीम में कोताही का अंजाम.....4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

इन्सानियत का तक़ाज़ा.....6

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

मुसलमानों में रिज़र्वेशन की बुनियाद क्या हो.....8

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

इल्म और अख़लाक़.....10

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

तक़वा क्या है?.....11

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

निकाह के चन्द मसले 13

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

मुहब्बत की मुस्तहिक़ ज़ात.....15

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

वालिदैन के साथ हुस्न-ए-सुलूक.....17

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मौलाना अली मियाँ (रह0) का तर्ज़े तदरीस.....19

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

सम्पादकीय

जदीद तालीम का बिगाड़

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

एक ज़माना था कि तालीम इन्सान के फ़लाह व बहबूद का ज़रिया थी, उससे इन्सानों को इन्सान बनाया जाता था और उसको ज़िन्दगी का सलीक़ा सिखाया जाता था, तालीम से इन्सान के अन्दर बुलन्द सिफ़ात पैदा होती थीं जिनसे वह बुलन्द पाया इन्सान बनता था, उसके अन्दर इन्सानियत के जौहर पैदा होते थे, वह दूसरों के काम आता था, लोगों को इन्सानियत सिखाता था, ईसार व क़ुर्बानी, अख़लाक़ व मुहब्बत जैसी सिफ़ात से वह आरास्ता होता था, फिर उस दौर में टेक्नालाजी का इस्तेमाल भी सिर्फ़ इन्सान की बहबूद के लिए होता था, हासिल यह है कि इल्म व अख़लाक़ का चोली दामन का साथ था।

बग़दाद के मशहूर ज़माना अस्पताल में हर तरह की सहूलतें थीं, जिनके लिए अफ़राद तैनात थे, मुख़्तलिफ़ मर्ज़ के मरीज़ों के लिए ऐसे खानों का बाक़ायदा इन्तिज़ाम था जो उनके लिए मुफ़ीद हों और आख़िरी बात यह है कि कुछ लोग सिर्फ़ इस काम के लिए ड्यूटी पर रखे गए थे जो मरीज़ों की तसल्ली का सामान करें, वह जाकर मरीज़ों से ऐसी बातें करते थे जिससे उनको बड़ा दिलासा मिलता था।

आज इल्म' टेक्नालाजी के मैदान में बहुत आगे बढ़ गया, लेकिन अख़लाक़ के जौहर से ख़ाली हो गया, इसका नतीजा यह है कि उससे बजाए इन्सानी सिफ़ात रखने वालों के जानवरों की सिफ़ात रखने वाले पैदा हो रहे हैं।

आज इल्म एक बिज़िनेस बन कर रह गया है, इन्सान लाखों लाख रुपया देकर इल्म हासिल करता है और फ़ारिग़ होकर उसी की वसूलयाबी में पूरी तरह लग जाता है और इसमें वह हर तरह की हदों को पार कर गया है, अगर उसने करोड़ों रुपये देकर पढ़ा है तो पहले मरहले में फ़ारिग़ होने के बाद उसको वह करोड़ों रुपये याद आते हैं और वह हर सूरत में इसको सूद–ब्याज के साथ वापस लेना चाहता है, एक दौर था कि डॉक्टर दिलासा देता था, आज डॉक्टरों को दिये हुए पैसे वापस लेने हैं, वह मरीज़ से आपरेशन की मेज़ पर सौदा करता है और उसकी जान से खेलता है और मसला सिर्फ़ डाक्टरों का नहीं' उनकी मिसाल तो सिर्फ़ इसलिए पेश की गयी कि वह सबसे बढ़कर इन्सानों के मसीहा रहे हैं, लेकिन आज मामला बिल्कुल उल्टा है।

इल्म व अख़लाक़ के अद्मे तवाज़ुन ने दुनिया को जहन्नमकदह बना दिया है, वह अपने फ़ायदे के लिए नए–नए हथकंडे अख़्तियार करता है और उसके लिए जान लेना भी बड़ी बात नहीं रह गयी, इन्सानों की दुनिया में जानवरों का तरीक़ा आज राएज हो रहा है और ख़ुदगर्ज़ी का मिज़ाज बनाया जा रहा है, जो इन्सानों को हलाकत के ग़ार में गिराने को तैयार है, अगर लोगों का ज़हन सही न किया गया और ज़ुल्म व बरबरियत और ख़ुदगर्ज़ी का मिज़ाज न बदला गया तो दुनिया का ख़ुदा ही हाफ़िज़ है।

इस वक़्त जिस तरह करप्शन बढ़ता जा रहा है, ज़िन्दगी के हर शोबे में जिस तरह रिश्वतख़ोरी और कामचोरी बढ़ती जा रही है, ज़िम्मेदारी का एहसास ख़त्म होता जा रहा है और इन्सान सिर्फ़ अपना फ़ायदा देखता है और यह चीज़ बढ़कर इस हद तक पहुंच गयी है कि बेटे को बाप का पास है न बाप के अन्दर बेटे की मुहब्बत है, अख़लाक़ व रवाबित को बिज़िनेस बना दिया गया है, आदमी अगर हंस कर बोलता भी है तो डर लगता है कि वह शायद इसकी भी फीस वसूल कर लेगा, कोई किसी के साथ मुहब्बत व अख़लाक़ से पेश आता है तो उसको भी कुछ न कुछ हुसूलयाबी की उम्मीद हो जाती है, सेल्फ़ सिस्टम इस हद तक तजाउज़ कर गया है कि वह ख़ुदगर्ज़ी की इन्तिहा को पहुंच रहा है, यह सिर्फ़ इसीलिए है कि इल्म व अख़लाक़ में तवाज़ुन नहीं रहा, शुरू से बच्चे को तालीम दी जाती है तो उसको ख़ुदगर्ज़ी सिखाई जाती है, अख़लाक़ी तालीम तो पहले लाज़िम समझी जाती थी, अब बराए नाम रह गयी है और इसके लिए अमली तदाबीर बिल्कुल भी नहीं अख़्तियार की जातीं, यह इल्म व अख़लाक़ का अद्मे तवाज़ुन है जिसने दुनिया को तबाही के दहाने पर लाकर खड़ा कर दिया है, यह ज़िम्मेदारी सबसे बढ़कर मुसलमानों पर है कि वह दुनिया को अख़लाक़ व मुहब्बत का दर्स दें और नबी–ए–रहमत (स0अ0व0) के दिये हुए दीन–ए–रहमत से इन्सानियत को रोशनास कराएं और इल्म में अख़लाक़ी तालीम को इस तरह मिला दें कि वह ख़ूबसूरत गुलदस्ता बनकर सामने आए और दुनिया उसकी महकती हुई हवाओं से मुअत्तर हो जाए।

दीनी तालीम में कोताही का अंजाम

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

"ऐ ईमान वालो! सब्र करो और मुक़ाबले में मज़बूती रखो और मोर्चों पर जमे रहो और अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम कामयाब हो जाओ।" (आले इमरानः 200)

अरबी में "सब्र" के माने हैं: जम जाना, पुख़्ता रहना और मुक़ाबला करना और अपनी जगह से न हटना, अपने उसूलों को न छोड़ना, उसके बाद है: "साबरुवा" यानि एक–दूसरे को सब्र की तलक़ीन करो, सब्र का माहौल, उसकी फ़िज़ा और कैफ़ियत पैदा करो, जैसे कोई बहुत बड़ा शामियाना होता है, अगर थोड़े आदमी होंगे छोटा शामियाना होगा, अगर कई सौ या कई हज़ार होंगे तो बड़ा शामियाना होगा, अल्लाह तआला तलक़ीन फ़रमाता है कि सब्र का इतना बड़ा शामियाना बनाओ कि सबके सरों पर वह तना हुआ हो, फिर आख़िर में फ़रमाता है: "वराबतुवा" अपने अक़ीदे की सरहदों पर जमे रहो, कुछ हो जाए, दुनिया बदल जाए, हुकूमतें बदल जाएं, सिक्का और ज़बान बदल जाए, ताक़त बदल जाए, हम अपने अक़ीदे से जो अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) ने और सब पैग़म्बरों ने हमें अता फ़रमाया है, हम ज़रा बराबर भी इन्हिराफ़ न करेंगे और अक़ीदा–ए–तौहीद से ज़र्रा बराबर भी न हटेंगे कि इस दुनिया का बनाने वाला और चलाने वाला दोनों एक हैं, तख़लीक़, हुक्म देना और इन्तिज़ाम करना उसी का काम है, अल्लाह तआला ही ने इस दुनिया को पैदा किया और वही इसका नज़्म व नस्क़ चलाता है।

यह दीन जो अल्लाह तआला ने आपको अता किया है उसके लिए जहां और चीज़ें हैं, वहीं थोड़ी सी समझ और थोड़ी सी कोशिश की ज़रूरत है और अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ शर्त है। इन सबके साथ थोड़ा सा इरादा और थोड़ी सी नहीं बल्कि ज़्यादा हिम्मत चाहिए, वह यह कि अल्लाह तआला की तरफ़ से हमको जो पैग़ाम मिला है उसको हम सीने से लगा लेंगे और उसको अपनी ज़िन्दगी का मसला बना लेंगे। जान जाए, चली जाए लेकिन हम अपने दीन से हटने वाले नहीं है। उसने पैग़म्बरों के ज़रिये हमको जो नेमत अता फ़रमायी है उसके सामने दुनिया की तमाम दौलतें और तमाम हुकूमतें गर्द हैं। इस नेमत को दांतों से पकड़ लो और आंखों में उसको बिठाओ और दिल में जगह दो, जिसने इस दीन की क़द्र की तो उसके गोया मज़बूत कड़ी को थाम लिया।

हर ज़माने के तक़ाज़े बदलते रहते हैं, ज़माने के इम्तिहानात और इसकी आज़माइशें बदलती रहती हैं, इसकी तरग़ीबात, लालचें, उसकी ज़बान, उसका क़ानून हत्ता कि निज़ामे हुकूमत व सियासत में तब्दीली होती रहती है। मैं किसी एक मुल्क और किसी एक ज़माने को भी नहीं कहता, मेरे सामने तो पूरी तारीख़ है। कभी ऐसा भी वक़्त आता है कि जब अपने दीन पर क़ायम रहना मुश्किल हो जाता है, दूसरी ताक़ते इसको अपने सियासी अग़राज़ व मक़ासिद के हुसूल के लिए और अपनी ताक़त में आने और अपना सिक्का चलाने और मुल्क पर हुकूमत करने के लिए यह कोशिश करती है कि मुसलमान अपने दीन से हट जाएं, इनसे मुतालिबा किया जाता है कि हमारी देवमालाई कुबूल कर लो और कुफ़्र और शिर्क के मुताल्लिक़ अपने रवैये में तब्दीली कर लो लेकिन दीन का मुताल्बा यह है कि जान चली जाए मगर दीन में कतर व बुयूनत कुबूल न करे, दीन की हिफ़ाज़त में अगर सैंकड़ों और हज़ारों नहीं लाखों जाने चली जांए और इज़्ज़ते कुर्बान हो जाएं तब भी कोई परवाह नहीं कि अस्ल चीज़ जिससे क़ब्र और क़यामत में वास्ता पड़ने वाला है वह यही दीन है। वहां तो यह पूछा जाएगा कि तुम्हारा रब कौन है? तुम्हारा दीन क्या है? और यह हुज़ूर कौन हैं? क़ब्र में यह काम नहीं आएगा कि आप फ़लां के बेटे हैं और एम. ए. पास हैं, किसी म्यूनिसिपल्टी या रियासत व हुकूमत के गवर्नर या हाकिम हैं। जिस तरह आप ट्रेन में बिना टिकट सवार हो जाएं और टिकट

कलेक्टर मांगे तो आप यह कहेंगे कि हमारे पास अच्छी घड़ी है और अच्छा साज़ व सामान है, हम फ़लां के बेटे और फ़लां के पोते हैं, लेकिन आपके इस जवाब से कोई फ़ायदा न होगा, वहां तो टिकट का सवाल होगा, यही हाल इस तालिब इल्म का होता है जो इम्तिहान के पर्चे का सही–सही जवाब देता है तो कामयाब हो जाता है, क़ब्र का भी यही हाल है, जहां अपना दीन और अपना ईमान काम आता है, इस दुनिया का भी यही हाल है, अल्लाह यह देखता है कि यह हमारे दीन पर कितना क़ायम है और उसके लिए किसने कितनी क़ुर्बानियां दी हैं और कितनी मज़बूती और इस्तिक़लाल का सुबूत दिया है।

तो सबसे पहला मुताल्बा यह है कि सब्र व ज़ब्त से काम लो, अपने दीन पर मज़बूती से जमे रहो, दूसरों को भी थामे और जमाए रखो और उनको सब्र की तलक़ीन व तरग़ीब दो, यह इस तरह हासिल होगा कि पहले ख़ुद इल्मे दीन हासिल करें और अपनी औलाद को भी दीन का इल्म दें और इसकी फ़िक्र करें कि इसका अक़ीदा ठीक है या नहीं यह अल्लाह और उसके रसूल को पहचानते हैं या नहीं? यह नहीं कि बच्चों की तरक़्क़ी व ख़ुशहाली और दौलतमंद घरानों में उनकी शादी कर दी जाए, इसकी अल्लाह के यहां कोई क़ीमत नहीं, अगर आपने अपने बच्चों को दीन की तालीम नहीं दी इसलिए बुनियादी काम यह है कि अपने बच्चों की दीनी तालीम व तरबियत का एहतिमाम करें और उसकी राह में कुछ क़ुर्बानी देना पड़े, कुछ ख़तरा मोल लेना पड़े लेकिन हिम्मत से काम लो और अपने बच्चों, घरवालों फिर मोहल्लेवालों और उससे बढ़कर गांववालों और आस–पास के लोगों को घूम–फिर कर दीन की तालीम दो कि जो नेमत और दौलत अल्लाह ने आपको अता की है और जितना दीन आप जानते हैं वह दूसरों को भी बताइये, इस वक़्त सबसे ज़्यादा ज़रूरत इस बात की है कि क़ुरआन मजीद और उर्दू पढ़े बग़ैर बच्चों को रहने न दीजिए, चाहे लोग आपको धमकाएं कि यह क्या खाएंगे, क्या कमाएंगे, इनको आजकल की ज़बान पढ़ाइये, आजकल का कोर्स पढ़ाइये, स्कूल भेजिए, लेकिन नहीं, ख़ुदा के यहां आपका दामन होगा और उनका हाथ होगा और हमें तो डर है कि कहीं ख़ुदा का दस्ते क़ुदरत और दस्ते ग़ज़ब न हो और आपका दामन न हो कि क्या पढ़ाया था अपने बच्चों को और क्या सिखाया था अपने बच्चों को।

आप याद रखिये कि दीनी तालीम के बग़ैर हिन्दुस्तान में मुसलमानों का रहना मुमकिन नहीं है। दुनिया में जो चीज़ें असर डालती हैं और उनके जो नताएज होते हैं, तालीमी ताक़त, लसानी ताक़त, अदबी ताक़त, क़ानूनी ताक़त और हुकूमती ताक़त के असरात और नताएज हमने देखे हैं लेकिन दीनी तालीम के बग़ैर मिल्लते इस्लामिया, उम्मते इस्लामिया बनकर हिन्दुस्तान में नहीं रह सकती, इसलिए हर क़ीमत पर अपने बच्चों को जुग्राफ़िया पढ़ाइये, साइंस व हिसाब पढ़ाइये व अदब पढ़ाइये, तारीख़ पढ़ाइये, लेकिन पहली और बुनियादी शर्त यह है कि उसके साथ साथ दीन की भी तालीम दीजिए, मस्जिद–मस्दिज और घर घर उसका इन्तिज़ाम होना चाहिए। इस तालीम को ख़ूब चलाइये, अगर दीन की तालीम को आप फैलाइयेगा नहीं, इसको दबाकर बक्स में बंद करके रखियेगा तो फिर इसके लिए ख़तरा पैदा हो जाएगा कि कहीं से कोई डाकू आकर इस पर डाका डाल दे लेकिन अगर आपने आस–पास के माहौल को सही रखा, दूसरों को भी इस दौलत में शरीक करेंगे तो दूसरे भी इसको अज़ीज़ रखेंगे और इसकी सरहदों की हिफ़ाज़त करेंगे।

अब जो ज़माना है वह नया ज़माना है, इसमें नए इन्तिख़ाबात होंगे, नई हुकूमत बनेगी और जो लोग हुकूमत बना सकते हैं वह क़ानून भी बना सकते हैं, इसलिए मुसलमानों को नए ख़तरात और नए चैलेंज का मुक़ाबला करने के लिए तैयार रहना होगा और दूसरों को भी सब्र व इस्तिक़ामत की तरग़ीब व तलक़ीन देनी होगी, अगर हमने इख़लास व इस्तिक़ामत का सुबूत दिया और ख़ुदा को हाज़िर व नाज़िर समझकर सारे काम किए तो कामयाबी हमारे क़दम चूमेगी, लेकिन अगर मुसलमानों ने दीनी तालीम के मामले में कोताही की तो मुसलमान–मुसलमान बनकर इस मुल्क में नहीं रह सकते। किसी और चीज़ का ख़तरा हम नहीं बताते, खाने को भी मिलता रहेगा, जानवरों को भी मिलता है, ग़ैर मुस्लिम भी आपसे अच्छा खाते हैं, लेकिन अल्लाह और उसके रसूल के यहां आप मुसलमान नहीं समझे जाएंगे और इस्लाम और मुसलमानों के दफ़्तर में आपका नाम नहीं लिखा जाएगा।

इन्सानियत का तक़ाज़ा

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नद्वी

अल्लाह तआला ने हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) को दुनिया में उतारा और उनको दुनिया की ज़िन्दगी गुज़ारने का रास्ता बताया और हुक्म दिया कि ज़िन्दगी गुज़ारने का जो अस्ल तरीक़ा है तुमको उस पर अमल करना है, लेकिन उनके बाद इस तरीक़े बहकते रहे, इसलिए कि आदमी के वसाएल महदूद होते हैं और ख़्वाहिशात ज़्यादा होती हैं, जिनका नतीजा यह होता है कि आदमी उन ख़्वाहिशात के दबाव से सही रास्ते से भटक जाता है और सही रास्ता वह इन्सानी रास्ता है जो अल्लाह ने अम्बिया (अलैहिस्सलाम) को बताया है, एक मौक़े पर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"ऐ लोगो! बेशक तुम्हारा पालनहार एक है और तुम्हारा बाप भी एक है, साफ़ सुन लो! किसी अरबी को किसी अजमी पर और किसी अजमी को किसी अरबी पर फ़ज़ीलत हासिल नहीं है, इसी तरह किसी सुर्ख़ को किसी काले पर और किसी काले को किसी सुर्ख़ पर कोई फ़ज़ीलत हासिल नहीं है सिवाए तक़वे के!" (बैहिक़ीः 5137)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने यह भी इरशाद फ़रमायाः

"तमाम लोग आदम की औलाद हैं और आदम मिट्टी के बने हैं।" (सुनन तिरमिज़ीः 4337)

इस हदीस में तमाम इन्सानियत को यह पैग़ाम दे दिया गया कि हर एक को अपनी हैसियत समझना चाहिए, यह ज़हन में रहना चाहिए कि वह बहुत हक़ीर चीज़ से बनाया गया है और वह अच्छा उसी वक़्त बन सकता है ज बवह अच्छा तरीक़ा अख़्तियार करे, लेकिन अगर वह मिट्टी ही में रहना पसंद करता है तो ज़ाहिर है कि वह बुरी हालत में रहेगा और मिट्टी की जो हालत है वही हालत उसकी हो जाएगी, यानि ज़िल्लत और रुस्वाई की हालत हो जाएगी, लेकिन अगर वह मिट्टी से निकलना चाहता है तो उसको बुलन्द अख़लाक़ अख़्तियार करने होंगे और यह राज क़ुरआन मजीद में भी बता दिया गया है कि हमने तुमको मिट्टी से पैदा किया है और फिर तुमको बहुत अच्छी बातें और अच्छा तरीक़ा बता दिया है, उनके ज़रिये तुम्हारे लिए यह मुमकिन है कि तुम मिट्टी से ऊंचे हो जाओ, मिट्टी से निकल कर बुलन्द बन जाओ, लेकिन अगर तुम उससे नहीं निकलोगे और ख़ुद को बुलन्द करने की कोशिश नहीं करोगे तो तुम ख़्वार और रुस्वा होगे, जैसे मिट्टी रुस्वा होती है और ख़ाक उड़ती है, गोया अल्लाह तआला ने क़यामत तक के लिए एक उसूल के तौर पर यह बात बयान फ़रमा दी कि जब हम इन्सान की हैसियत से ज़िन्दगी गुज़ारेंगे तो हम मिट्टी से बुलन्द होंगे वरना फिर हम मिट्टी ही के जुमरे में रहेंगे, जिस तरह जानवर होते हैं कि उनको मिट्टी से निकलने का हुक्म नहीं दिया गया है, न मिट्टी से निकलने का रास्ता उनको बताया गया है, वह मिट्टी में ही रहते हैं और उसी में चर लेते हैं, अलबत्ता इन्सान इससे बुलन्द है और उसको बुलन्दी हासिल करने का तरीक़ा भी बताया गया है कि जब तुम सब आदम की औलाद हो तो एक–दूसरे के भाई हो, लिहाज़ा एक–दूसरे की फ़िक्र भी रखो और तुममें बेहतर सिर्फ़ वही है जो "तक़वा" अख़्तियार करे।

"तक़वा" अरबी ज़बान का लफ़्ज़ है और यह अरबी के लफ़्ज़ "वक़ी–यक़ी–वक़ाया" से बना है, जिसके माने है, जिसके माने हैंः अपने को बुरी बातों से बचाना, अपने को ख़तरे से बचाना, अपने को बुरी जगह या बुरी चीज़ से बचाना, यह सब मफ़हूम इसमें शामिल हैं, इस्लामी इस्तलाह में हम "तक़वा" का जो लफ़्ज़ बोलते हैं, उसका मतलब भी यही है कि अपने को बुरी बातों से बचाव, अपने को ग़लत बातों से बचाव और ग़लत बातें कौन सी हैं? वह भी तुमको बताया गया है कि ग़लत बातें फ़लां–फ़लां हैं, लिहाज़ा जो शख़्स भी इन बातों से एहतियात करेगा, वह अपने को उन ग़लत बातों से बचाएगा, उसको अच्छा और ऊंचा दर्जा दिया जाएगा और वह एक बेहतरीन इन्सान शुमार होगा, इसी तरह जो शख़्स अपने को बुरी बातों से नहीं बचाएगा, वह बेहतर इन्सान नहीं हो सकता है।

ग़ौरतलब बात यह है कि जब हम सब इन्सान हैं और हुज़ूर (स0अ0व0) फ़रमाने आली यह है कि अरब हो या अजम, काला हो या गोरा, आपस में तमाम इन्सान

एक ही हैं और सब भाई–भाई हैं, इसलिए कि सब आदम की औलाद हैं। यानि एक बाप की औलाद हैं तो क्यों न सब लोग इस मक़ाम पर आने की कोशिश करें जिस पर आज इकट्ठा होने की सख़्त ज़रूरत है, जो मक़ाम हमको सिखाया गया है और बताया गया है और वह यह कि हममें से हर इन्सान दूसरे इन्सान को अपना भाई समझे। जब हर एक दूसरे को अपना भाई समझेगा तब हर एक दूसरे से क़रीब होगा, उसके फ़ायदे को अपना फ़ायदा समझेगा, जैसे भाई–भाई को समझता है और वह उसके फ़ायदे को अपना फ़ायदा और उसके नुक़सान को अपना नुक़सान। कुरआन और हदीस में यह फ़रमाया गया है कि सब इन्सान भाई–भाई हैं, इसलिए हमको चाहिए कि हम एक–दूसरे के साथ वही रवैया अख़्तियार करें जो भाई–भाई के साथ करता है और यह देखा गया है कि हर इन्सान ख़्वाह वह कितना ही बुरा हो लेकिन बुरी बात को बुरा समझता है। झूठ बोलने वाला कितना ही झूठ बोले लेकिन अगर उससे यह मालूम किया जाए कि झूठ अच्छी चीज़ है या बुरी चीज़ तो यक़ीनन वह यही कहेगा कि झूठ बुरी चीज़ है। इसी तरह अगर कोई आदमी किसी को कितनी ही तकलीफ़ पहुंचाता हो और बड़ा ज़ालिम हो लेकिन अगर उससे पूछा जाए और उसकी सही राय ली जाए कि ज़ुल्म कैसी चीज़ है तो वह भी यही कहेगा कि ज़ुल्म बुरी चीज़ है, इससे यह समझा जा सकता है कि अल्लाह तआला ने हर इन्सान में एक एहसास रखा है कि वह बुरे को बुरा समझता है और अच्छे को अच्छा समझता है।

इन्सानी मिज़ाज का उमूमी जाएज़ा लेने से यह बात बिल्कुल वाज़ेह हो जाती है कि जब तमाम इन्सान एक–दूसरे के भाई हैं और बुरे–अच्छे को समझते भी हैं तो हम सबको उसी हिसाब से हरएक से मामला करना चाहिए। हम सोसाइटी के हर फ़र्द के साथ हुस्ने सुलूक करें, वह सोसाइटी ख़्वाह एक मज़हब की हो या बहुत से मज़हबों की हो। हमको यह तय करना है कि हम बहैसियत इन्सान के आपस में एक–दूसरे की हमदर्दी करेंगे, एक–दूसरे की तकलीफ़ को दूर करने की फ़िक्र करेंगे, जैसे अपनी तकलीफ़ दूर करते हैं, अपने भाई की तकलीफ़ दूर करते हैं और अपने पड़ोसी की तकलीफ़ दूर करते हैं, ख़ुद कुरआन मजीद में भी इन बातों का हुक्म है कि तुम अपने पड़ोसी का ख़्याल करो और अपने अज़ीज़ का ख़्याल करो। लिहाज़ा सोसाइटी में अगर कोई हमारा रिश्तेदार है तो हम रिश्तेदारी के नाते उसका ख़्याल करेंगे, अगर कोई हमारा पड़ोसी है तो पड़ोसी के लिहाज़ से उसका ख़्याल करेंगे और इस सिलसिले में कोई यह न समझे कि हमारा मज़हब कोई रोक लगाएगा, क्योंकि जब इन्सानी सतह पर कुछ करना हो तो उसमें मज़हब नहीं देखा जाता है, जब आप एक साथ रहते हैं और एक दूसरे के पड़ोसी हैं तो उसमें मज़हब के बुनियाद पर एक दूसरे से सुलूक करने की मनाही बिल्कुल नहीं है, बल्कि सुलूक करना मुस्तहसन है। ख़ासकर जब कोई सोसाइटी मुश्तरिक मज़ाहिब और मुश्तरिक़ ख़्यालात की हामिल हो तो ऐसी सूरत में हमें एक–दूसरे का ख़्याल रखना ज़्यादा ज़रूरी होता है, इसलिए कि जब सोसाइटी में मुख़्तलिफ़ ख़्यालात और मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब के मानने वाले होते हैं तो एक–दूसरे को शक की निगाह से ज़्यादा देखते हैं, ऐसे वक़्त में हमारी ज़िम्मेदारी मज़ीद बढ़ जाती है कि हम ज़्यादा अख़लाक़ बरतें ताकि यह जो दूरी है यह दूरी इन्सानी सतह पर दूर हो जाए। चूंकि हम एक इन्सान हैं इसलिए हमारे अन्दर अख़लाक़ हैं, हमारे अन्दर हुस्ने सीरत है, हमारे अन्दर एक–दूसरे से हमदर्दी का जज़्बा है, हमारे अन्दर दूसरे के लिए मुहब्बत है, यह इन्सान की हैसियत से हमारी सिफ़त और हमारा तर्ज़ व तरीक़ा होना चाहिए, जब हम इन्सान हैं तो हमको इन्सानी सिफ़ात, इन्सानी अख़लाक़ और इन्सानी सीरत अख़्तियार करनी चाहिए।

हमारे मुल्क हिन्दुस्तान में भी मुख़्तलिफ़ तबक़ात हैं, मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब हैं और मुख़्तलिफ़ नस्लें हैं, इसलिए यहां इस बात की ज़्यादा ज़रूरत है कि हम एक–दूसरे के साथ ऐसा सुलूक करें कि हम सब आपस में भाई–भाई मालूम हों और आपस में ऐसा इत्तिहाद पैदा हो जो इन्सानी इत्तिहाद कहलाए न कि सियासी इत्तिहाद, इसलिए कि सियासत तो मस्लहतों से चलती है लेकिन इन्सानी अख़लाक़ और इन्सानियत इस तरह नहीं चलती कि हम सिर्फ़ अपनी मस्लहत देखें बल्कि इसमें यह भी देखना चाहिए कि हम एक–दूसरे के साथ भाई–भाई की तरह रहें।

इल्म और अख़लाक़

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

इस्लाम में इल्म की अहमियत का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि जो इस्लाम बनी नौ इन्सानी के दरमियान रंग व नस्ल, ज़ात–बिरादरी और हसब व नसब की बुनियाद पर कोई तफ़रीक़ नहीं करता और तमाम इन्सानों को एक ही सफ़ में ख़ड़ा करता है। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का इरशाद है:

"ऐ इन्सानो! तुम्हारा रब एक और तुम्हारा बाप भी एक है, किसी अरबी को किसी अजमी पर और किसी अजमी को किसी अरबी पर न ही गोरे को काले पर और न ही काले को किसी गोरे पर कोई फ़ज़ीलत हासिल है, सिवाए तक़वा की बुनियाद पर।" वही इस्लाम इल्म की बुनियाद पर इन्सान–इन्सान के दरमियान तफ़रीक़ करता है:

"कह दीजिए क्या वह लोग जो जानते है और वह लोग जो नहीं जानते सब बराबर हैं? नसीहत तो वही लोग कुबूल करते हैं जो अक़्ल वाले हैं।" (सूरह ज़ुमर: 9)

हुज़ूरे अकरम (स0अ0व0) ने फ़रमाया: "आलिम की फ़ज़ीलत आबिद पर इस तरह है, जिस तरह मेरी फ़ज़ीलत तुम्हारे अदना तरीन आदमी पर है।" (तिरमिज़ी)

दूसरी तरफ़ इस्लाम इस इल्म के हुसूल पर ज़ोर देता है जो मारिफ़ते ख़ुदावन्दी के साथ–साथ आला अख़लाक़ का जौहर पैदा करे, अल्लाह तआला ने अपनी नबी (स0अ0व0) की तारीफ़ करते हुए फ़रमाया: "बेशक आप तो अख़लाक़ की बुलन्दी पर फ़ाएज़ हैं।" (सूरह क़लम: 4) और जब हज़रत आयशा (रज़ि0) से रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के अख़लाक़ के बारे में पूछा गया तो फ़रमाया: "आप (स0अ0व0) के अख़लाक़ तो कुरआनी हैं।" (बुख़ारी)

इल्म और अख़लाक़ एक ही सिक्के के दो रुख़ हैं। यह दो रुख़ जब मिलते हैं तब सिक्का बनता है, जैसे परिन्दे के दो पर होते हैं, एक पर काट दिया जाए तो सिर्फ़ एक पर से वह फ़िज़ा में नहीं उड़ सकता है, बल्कि ज़मीन पर गिर पड़ेगा और किसी बिल्ले या कुत्ते का शिकार बन जाएगा। इल्म एक चिराग़ की तरह है और अख़लाक़ उसकी रोशनी, चिराग़ की क़ीमत उसकी रोशनी से होती है। इल्म की मिसाल एक फलदार दरख़्त है, इल्म दरख़्त है जबकि अख़लाक़ उसके फल और पत्ते हैं क्योंकि दरख़्त की कोई क़ीमत नहीं जब तक कि उसमें पत्तों की ख़ूबसूरती न हो और उसके फलों में मिठास न हो, जबकि पत्ते और दरख़्त के बग़ैर फलों को कोई वजूद नहीं।

अगर आलिम अख़लाक़े हस्ना और औसाफ़े हमीदा से मुतास्सिफ़ न हो तो वह तरक़्क़ी के रास्तों को मस्दूद देखेगा चाहे उसका इल्म बड़ा वसीअ हो, जब तक वह इल्म व अख़लाक़ से अपने आप को मुज़य्यन न कर ले न ही वह आगे बढ़ सकता है और न ही तरक़्क़ी कर सकता है और न ही वह बुलन्दी हासिल कर सकता है, इल्म अगर अख़लाक़ और इज़्ज़त से ख़ाली हो जाए और रब के नाम से अपनेआप को वाबस्ता न रखे तो ऐसा इल्म तबाही और गुमराही, तश्द्दुद और दहशतगर्दी का बाइस बनता है, जैसा कि बहुत से मोमालिक में हो रहा है। जो मोमालिक इन जौहरी हथियारों से बिल्कुल तबाह व बर्बाद हो गए, जिनको इन्सान ने सिर्फ़ अपने इल्म व मुताला और तर्जुबात की रोशनी में हासिल किया था, लेकिन अगर यही इल्म अख़्लाक़, शराफ़त और अल्लाह के सामने जवाबदेही के एहसास के साथ हासिल किया जाता तो यह अस्लहे और यह इल्म तख़रीबकारी और बिगाड़ में इस्तेमाल न होते और न ही हमको लाशों और जिस्म के चिथड़े और सरों के ढेर नज़र आते जो अख़लाक़ से आरी इल्म का शिकार बन गए। जो कुछ बेहयाई, उरयानियत, फ़ह्हाशी और हमजिंस परस्ती के मनाज़िर सामने आ रहे हैं और घरों पर साए की तरह मंडरा रहे हैं इन्हें तबाह व बर्बाद कर हरे हैं, ख़ानदानों को तोड़ रहे हैं, इन सबके पीछे यही ज़राए और यही जदीद टेक्नालाजी है, जिस पर इन्सान ने अपने इल्म व अक़्ल से क़ब्ज़ा कर लिया है और जिसका इस्तेमाल अफ़वाहों और झूठी ख़बरों को फ़ैलाने में किया है न कि अच्छी बातों और अख़लाक़े हस्ना को फैलाने के लिए और शरई तक़ाज़ों को पूरा करने और दीनी क़ानून को नाफ़िज़ करने के लिए। अस्ल मसला यह है कि इल्म व अख़लाक़ को जमा किया जाए क्योंकि अगर परिन्दा एक पर से उड़ेगा तो उसका अंजाम सब जानते हैं।

(अनुवाद: मुहम्मद अमीन हसनी नदवी)

मुसलमानों में रिज़र्वेशन की बुनियाद क्या हो?

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

इस्लाम से पहले दुनिया में जो मज़ाहिब मौजूद थे, उनमें इन्सानों के एक गिरोह को नस्ली बुनियाद पर दूसरे इन्सानों पर अफ़ज़ल क़रार दिया जाता था, ईरानी आर्य नस्ल से ताल्लुक़ रखते थे और वह अपने आप को तमाम इन्सानों का मख़दूम और पैदाइशी तौर पर हुक्मरानी का अहल समझते थे, इसके साथ–साथ शाही ख़ानदान के बारे में यह मुबाल्ग़ा आमेज़ तसव्वुर भी पाया जाता था कि इनकी रगों में खुदा का ख़ून दौड़ता है। यहूदियों और ईसाईयों का तसव्वुर था कि वह चूंकि हज़रत इस्हाक़ (अलैहिस्सलाम) की नस्ल से हैं इसलिए उन्हें पूरी इन्सानियत पर फ़ज़ीलत हासिल है और वह खुदा के क़रीबी लोग हैं। आर्यों ही का क़ाफ़िला ईरान से हिन्दुस्तान आया और धीरे–धीरे तबक़ाती तक़सीम और गहरी होती गयी, इसीलिए यहां उन्होंने वह क़ानून बनाया जिसे "मनु" की तरफ़ मन्सूब किया जाता है। इसमें इन्सानियत को मुस्तक़िल तौर पर चार हिस्सों में तक़सीम कर दिया गया।

एक गिरोह के बारे में कहा गया कि यह खुदा के सर से पैदा किये गए हैं, यह पैदाइशी तौर पर मुक़द्दस और इम्तियाज़ी शान के हामिल हैं। आम लोगों का काम है कि इनकी बारगाह में नज़र व नियाज़ पेश करें और इनको राज़ी रखें। इसी में लोगों की निजात है। बादशाहों को भी इस गिरोह के ताबेअ रखा गया। यह गिरोह ब्राहम्णों का है। दूसरा गिरोह वैश्य का है, जो खुदा के बाज़ूओं से पैदा किये गए हैं, इनका कारोबार–हुकूमत को चलाना है, तीसरा गिरोह क्षत्रियों का है जो इनके अक़ीदे के मुताबिक़ खुदा की रानों से पैदा किये गए हैं, मेहनत व मज़दूरी करना इनकी ड्यूटी है, चौथा गिरोह शूद्र का है जिनके बारे में इनका मानना है कि यह खुदा के पांव से पैदा किये गए हैं, इन तीनों गिरोहों का बुनियादी काम ब्राहम्णों की ख़िदमत करना और उनको खुश रखना है, लेकिन खुद इन तीनों तबक़ों के दरमियान दरजात व मरातिब में बड़ा तफ़ाउत है। शूद्र तो जानवरों से भी बदतर हैं, उन पर इल्म का दरवाज़ा बन्द है, उनका साया भी इस लायक़ नहीं है कि ऊंची ज़ात वालों पर पड़ सके। ऊंची ज़ात वालों के मंदिरों के दरवाज़े इन पर बन्द हैं। आमतौर पर द्रविड़ हिन्दुस्तान के अस्ल बाशिन्दे थे, वह बेचारे इस हक़ीर सुलूक के मुस्तहिक़ क़रार दिये गए और इन्हें शुमाली हिन्द बल्कि पूरे मुल्क से खदेड़कर जुनूबी हिन्द के आख़िरी साहिली पट्टी में मुक़ीम होना पड़ा जो उस ज़माने में शहरी सहूलियतों और तहज़ीब व सक़ाफ़त की किरनों से दूर का इलाक़ा था।

हिन्दुस्तान के लोगों में सदियों इस तसव्वुर की तब्लीग़ की गई कि नीच समझे जाने वाले लोग खुद भी हैसियत पर क़ानेअ हो गए, इस सोच को मज़ीद पुख़्ता करने वाले और मज़लूम शूद्रों को एहतिजाज से रोकने के लिए ब्राहम्णों ने आवागोन का तसव्वुर दिया यानि इन्सान अपने आमाल के एतबार से दुनिया में बार–बार जन्म लेता रहता है। इस तरह शूद्रों को बताया गया कि तुम्हारा शूद्र होना बिला सबब नहीं है, यह पिछले जन्म के आमाल का नतीजा है, अगर इस जन्म में तुम्हारे आमाल अच्छे रहे और तुमने ब्राहम्णों की ख़िदमत का हक़ अदा किया तो तुम अगला जन्म एक ब्राहम्ण की सूरत में ले सकते हो, यह वह तसव्वुर था जिसने नीच समझे जाने वाले लोगों को मुतमईन कर दिया, इस ग़ैर इन्सानी तसव्वुर को चूंकि मज़हबी रंग दे दिया गया इसलिए इसकी जड़े इतनी गहरी हो गईं कि मुताद्दिद इस्लाही कोशिशों के बावजूद आज पढ़े–लिखे लोगों में भी यह सोच मौजूद है और अमलन ब्राहम्णों और ऊंची ज़ात वालों की फ़रमारवाई का सिक्का चल रहा है।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने दुनिया को जो इन्क़िलाबी तसव्वुरात दिये उनमें एक वहदते इन्सानियत का तसव्वुर भी है। क़ुरआन ने साफ़ ऐलान कर दिया कि तमाम इन्सान एक ही शख़्स की औलाद हैं, इन्सानों का कोई गिरोह न खुदा की औलाद है और न पैदाइशी तौर पर खुदा को ज़्यादा महबूब है। खुदा के नज़दीक नस्ली

बुनियादों पर कोई ऊंचा और नीचा नहीं है, बल्कि इन्सान के बाइज़्ज़त होने का मेयार उनका अमल और बर्ताव है। इस तसव्वुर से इन्सानी मसावात की फ़िक्र को तक़वियत पहुंचती है। जिन लोगों को इन्सानों को मुख़्तलिफ़ ख़ानों में तक़सीम किया था उन्होंने इन्सानों के एक गिरोह को ख़ुदा और बन्दों के दरमियान वास्ता बना दिया था और तसव्वुर दिया था कि हर आम व ख़ास की ख़ुदा तक रसाई नहीं हो सकती, इसीलिए मुसलमानों में पड़ोसी क़ौमों से तास्सुब की वजह से कभी–कभी इलाक़ाई, लसानी और नस्ली तास्सुब की आग भड़क उठती है लेकिन चूंकि यह इस उम्मत के बुनियादी अक़ीदे और असासी फ़िक्र के ख़िलाफ़ है इसलिए इसको मुसलमानों में कभी भी दवाम व इस्तमरार हासिल नहीं हुआ और न उम्मत के दीनदार तबक़े ने कभी इसे क़ुबूल किया।

इस वक़्त मुल्क इसी सूरतेहाल से गुज़र रहा है। बिरादराने वतन में ज़ात–पात की चिंगारी सुलग रही है और शोला बनने को तैयार है। दूसरी तरफ़ मुसलमानों में पसमांदा ज़ात और ऊंची ज़ात वग़ैरह का राग अलापा जा रहा है ताकि इस तसव्वुर से सियासी फ़ायदा उठाया जाए। हो सकता है कि सियासी फ़ायदे के लिए कुछ मुसलमानों को पसमांदा तबक़ा क़रार देकर उन्हें फ़ायदा पहुंचा दिया जाए लेकिन ज़ाहिर है कि यह मुसलमानों के लिए मुफ़ीद से ज़्यादा नुक़सानदेह साबित होगा।

अर्से से हिन्दुस्तान में मुसलमानों का मुतालिबा रहा है कि उन्हें तालीम, मुलाज़िमत और सियासी नुमाइन्दगी में रिज़र्वेशन दिया जाए ताकि वह मौजूदा पसमांदगी से बाहर आ सकें और यक़ीनन यह हुकूमत की ज़िम्मेदारी है, इसलिए कि यह पसमांदगी मुसलमानों के साथ रवां रखी जाने वाली तंगनज़री और नाइंसाफ़ी का नतीजा है और हुकूमत को ख़ुद अपनी नाइंसाफ़ी की तलाफ़ी करनी चाहिए। इस रिज़र्वेशन की बुनियाद मआशी पिछड़ापन होना चाहिए न कि ज़ात–पात इसलिए इस्लाम में क़बाएल व ख़ानदान, ऊंच–नीच को ज़ाहिर नहीं करते बल्कि ख़ानदान तारूफ़ व पहचान के लिए जैसे इन्सान अलग–अलग सूरतों से पहचाना जाता है, अलग–अलग नामों से उसकी पहचान होती है, मुख़्तलिफ़ मक़ामात और शहरों की निस्बत से लोगों की सुकूनत का इल्म होता है, इसी तरह अपने मूरिसे आला की निस्बत से भी इन्सान की शिनाख़्त होती है।

मुसलमानों को समझ लेना चाहिए कि अवलन तो यह तक़सीम ख़िलाफ़े वाक़्या है। हिन्दु समाज से मुतास्सिर होने बावजूद आज भी मुसलमान मुआशरे में ज़ात–पात की जड़ें इतनी गहरी नहीं है, एक मुसलमान दूसरे मुसलमान को महज़ ख़ानदान की निस्बत से हक़ीर नहीं समझता, ऐसा नहीं है कि बाज़ मस्जिदें सादात व शुयूख़ के लिए मख़सूस हों और दूसरों को उसमें दाख़िल होने की इजाज़त न हो। ऐसा नहीं है कि कोई अंसारी और नदाफ़ इमाम हो तो मुग़ल और पठान उनके पीछे नमाज़ पढ़ने से इनकार कर दें। ऐसा नहीं है कि ख़ानकाहों में इस्लाह व मश्ख़ियत के मन्सब पर सिर्फ़ सादात व शेख़ ही फ़ाएज़ हैं।

दूसरे जब कोई अमल लगातार होने लगता है तो वह अक़ीदा बन जाता है, इसलिए अगर ज़ात–पात की बुनियाद पर रिज़र्वेशन दिया गया तो यह शुरूआत में तो एक सियासी अमल होगा लेकिन धीरे–धीरे लोगों के दिल भी तक़सीम हो जाएंगे, उनकी सोच भी बदल हो जाएगी और मुसलमानों में भी बिरादराने वतन की तरह ज़ात–पात की गहरी तक़सीम ख़ुदा न ख़्वास्ता पैदा हो जाएगी। अब ग़ौर कीजिए जो दीन तबक़ाती तसव्वुर को मिटाने के लिए आया और जिसने इन्सानी वहदत का तसव्वुर दिया उसी दीन की हामिल उम्मत अपनेआप को ऊंचे–नीचे तबक़ात में तक़सीम कर ले इससे ज़्यादा बदक़िस्मती की कोई बात हो सकती है।

ख़ुद जिन मुसलमान ख़ानदानों को हुकूमत पस्त तबक़ा क़रार देती है और इस बुनियाद पर उनको कुछ रिआयत देना चाहती है, वह सोचें कि क्या उनको अपने लिए यह बात पसंद है कि उन्हें कमतर और ज़लील तसव्वुर किया जाए और इस बुनियाद पर कुछ मुलाज़िमतों की भीख दे दी जाए, फिर यह भी सोचना चाहिए कि आइन्दा नस्लों पर इसका क्या असर पड़ेगा, बिरादराने वतन में जो लोग दलित कहलाते हैं, उनके अन्दर अपनी कमतरी का एहसास इस दर्जे रासिख़ हो चुका है कि निकाले नहीं निकलता। अगर आज मुसलमानों के कुछ ख़ानदानों को पसमांदा ज़ात क़रार दे दिया गया तो पचास–सौ साल के बाद उनकी आने वाली नस्लें भी ऐसे ही एहसासे कमतरी में पड़ जाएंगी, इसलिए मुसलमानों को मुत्तफ़िक़ा तौर पर इस बात का मुतालिब करना चाहिए कि उन्हें मआशी बुनियाद पर रिज़र्वेशन दिया जाए न कि ज़ात–पात की बुनियाद पर।

तक़्वा क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुसलमानों के लिए लम्हा–ए–फ़िक्रिया:

मुसलमानों को इस वक़्त इस बात का लिहाज़ रखना चाहिए कि हमारे लिए दलील फ़क़त किताब व सुन्नत है और हमारे सामने जो रास्ता है वह सिर्फ़ अल्लाह के नबी (स0अ0व0) की सीरत का रास्ता है और उसकी जो तफ़्सीलात हमारे सामने हैं, वह तफ़्सीलात हज़रात–ए–सहाबा (रज़ि0) की बताई हुई हैं फिर उन्हीं तफ़्सीलात को हज़राते औलिया किराम (रह0) और अपने वक़्त के अइम्मा व उलमा ऐसा खोल–खोल कर अपनी ज़िन्दगी और अपने ज़बान व क़लम से बयान किया है कि आदमी अगर उसको देखे तो उसकी हक़ीक़त समझ में आती है लेकिन अगर कोई शख़्स उसके बावजूद भी यह समझता है कि सबसे ज़्यादा मैं ही जानता हूं तो ख़तरा है कहीं वह भटकता न चला जाए।

तक़्वे का मिज़ाज बनाने के लिए ज़िक्र बहुत ज़रूरी है और ज़िक्र के लिए ज़रूरत है कि आदमी अल्लाह वालों की सोहबत अख़्तियार करे, ताकि उसका दिल रोशन हो जाए और जब दिल रोशन होता है और अल्लाह का ध्यान पैदा होता है तो फिर आदमी ग़लतियों से बचता है और बुराई और गन्दगी से अपनेआप को दूर करने की कोशिश करता है।

तक़्वा के मराहिल:

तक़्वा ईमान वालों के लिए एक बुनियादी सिफ़त है और हमें इसका हुक्म है, कुरआन मजीद में एक जगह इरशाद है:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह से उसी तरह डरते रहो जैसे उससे डरना चाहिए और न मरना मगर इस हाल में कि तुम मुसलमान हो।" (आले इमरान: 102)

तक़्वा अख़्तियार करने का सबसे बुनियादी मरहला शिर्क से बचना है, आदमी शिर्क और उसकी आमेज़िश से बचे और उसकी उन तमाम बातों से बचे जिसमें अदना क़िस्म का भी शिर्क का शुब्हा महसूस होता हो। दूसरा मरहला यह है कि फिर वह अल्लाह की मासियत और गुनाहों से बचे, बतौरे ख़ास बड़े–बड़े गुनाहों से बचे। तीसरा मरहला यह है कि आदमी मकरूहात से बचे और आख़िरी दर्जा यह है कि अल्लाह दिल के अन्दर ऐसा आ जाए कि ग़ैरुल्लाह निकल जाए, ख़्वाजा अज़ीज़ुल हसन मजज़ूब का शेर है:

हर तमन्ना दिल से रुख़्सत हो गई
अब तो आ जा अब तो ख़लवत हो गई

यह शेर इसी हक़ीक़त की तरजुमानी है, बिलाशुब्हा अल्लाह की ज़ात इतनी ग़ैरतमन्द है कि जब तक दिल के अन्दर ग़ैरों को बसाया जाएगा और ग़ैरों की मुहब्बतें पाली जाएंगी, उस वक़्त तक अल्लाह की मुहब्बत दिल में दाख़िल नहीं हो सकती, लिहाज़ा तक़्वा मुकम्मल जब होगा और अल्लाह का लिहाज़ पूरी तरह जब ही पैदा होगा, जब आदमी हर तरह का तक़्वा अख़्तियार करे, वह शिर्क से बचे, मासियत से बचे और मुश्तबहात व मकरूहात से बचे, यहां तक कि ग़ैरुल्लाह से भी बचे और उसका दिल अल्लाह की याद में ऐसा मस्त हो जाए, वह अपने आप को अल्लाह के लिए ऐसा फ़ारिग़ कर दे कि पूरी तरह अल्लाह से मुतवज्जह हो जाए, यह अस्ल तक़्वे की शान है और यह तक़्वा का आला तरीन मेयार है, जो मेयार अल्लाह तआला ने अपने नबियों को दिया, जिनसे बढ़कर लोग न पैदा हुए और न क़यामत तक होंगे और उनके सरदार सरकारे दो आलम हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स0अ0व0) को अल्लाह ने इसी तक़्वे का आला तरीन मेयार अता फ़रमाया। अल्लाह तआला ने आप (स0अ0व0) को ऐसा बनाया कि नुबूव्वत से पहले भी आपको अल्लाह ने हर ग़लत काम और हर तरह की मासियत से बचाया, हर तरह के मकरूहात से बचाया, सीरत में बाज़ औक़ात ऐसे मिलते हैं कि एक मर्तबा आप (स0अ0व0) के हमजोली किसी जगह शादी के जश्न में

ले गए, जहां उन लोगों की खुराफ़ात हो रहीं थीं, तो वहां पहुंचते ही अजीब बात यह हुई कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) को नींद आ गयी और आप ऐसा सोए कि जब वह सारा तमाशा ख़त्म हो गया तब आप (स0अ0व0) की आंख खुली।

हिफ़ाज़त–ए–इलाही:

अल्लाह तआला जब अपने किसी ख़ास बन्दे को बचाना चाहता है तो इसी तरह बचाता है, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की शान तो ऐसी बुलन्द है कि उसका कोई तसव्वुर नहीं कर सकता, इसके अलावा रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के जो गुलाम सहाबा थे और उन गुलामों के गुलाम जो औलिया थे, उनके वाक़्यात भी अगर देखें तो हैरत होती है कि अल्लाह तआला उनको कैसे बचाता है। सच्ची बात यह है कि औलिया अल्लाह तो गुलामों के गुलाम हैं, लेकिन अल्लाह तबारक व तआला उनके रास्ते पर चलने वालों को भी वह रोशनी और वह हिस्स अता फ़रमा देते हैं और उनके साथ अल्लाह का ऐसा फ़ज़ले ख़ास होता है कि अल्लाह उनको बचाते हैं।

हज़रत मौलाना अली मियां नदवी (रह0) यक़ीनन अल्लाह के मुक़र्रब बन्दे और वली थे और अल्लाह के नबी (स0अ0व0) के गुलामों के गुलाम थे, उनका वाक़्या है कि आप बहुत छोटे थे, तक़रीबन दो–ढ़ाई साल की उमर होगी, तो आपकी ख़लाई तकिया से आपको शहर ले जा रही थी, शहर के बाज़ ख़ानदानी अइज़्ज़ा से मिलवाने के लिए, शहर ले जाने के रास्ते में एक छोटा सा गांव लोहानीपुर पड़ता है, वहां किसी के तीजे या चालिसवें का खाना हो रहा था, जब वह ख़लाई वहां से गुज़री तो लोगों तो लोगों के इसरार पर उस खाने में शरीक हो गई, वह बेचारी ग़रीब थी, इसीलिए खाने को बैठ गई, मगर उसका बयान है कि अली मियां बच्चे थे और बच्चों की आदत होती है कि वह खाने के लिए हाथ बढ़ाते हैं, लेकिन अजीब बात है कि अल्लाह तआला ने उससे यह अजीब–ग़रीब जुमला कहलवाया कि बेटा! यह खाना तुम्हारे लिए मुनासिब नहीं है और फिर उसने आपको वह खाना खाने भी नहीं दिया, वह कहती है कि हमने एक लुक़्मा भी खाने नहीं दिया। मालूम हुआ कि हज़रत मौलाना के साथ अल्लाह का फ़ज़ले ख़ास शामिले हाल था, इसलिए अल्लाह ने ऐसे खाने से भी महफ़ूज़ रखा।

तक़्वा के एहतिमाम का फ़ायदा:

वाक़्या यह है कि अगर इन्सान तक़्वे का एहतिमाम करे तो यह एहतिमाम नस्लों में जारी रहता है और अल्लाह तआला बच्चों की भी हिफ़ाज़त फ़रमाता है। तक़्वे के लिए अक्ले हलाल का एहतिमाम भी निहायत ज़रूरी है, अगर अक्ले हलाल का एहतिमाम किया जाए तो ख़ानदानों में बरकतें पैदा होती हैं और अल्लाह तआला नस्लों में दीन मुन्तक़िल करता है, लेकिन अगर हलाल व हराम का फ़र्क़ न हो और आदमी का मुतमह नज़र बस यह हो कि माल आना चाहिए, ख़्वाह मुश्तबह हो या कुछ भी हो, तो ऐसा मिज़ाज तक़्वे के बिल्कुल बरअक्स है, फिर कभी भी तक़्वे का मिज़ाज नहीं बन सकता। हासिले बहस यह कि तक़्वे का पहला मरहला यह है कि आदमी अपनी तरबियत करे, अपना मिज़ाज बनाने की कोशिश करे और ख़ासकर अक्ले हलाल का ग़ैर मामूली एहतिमाम करे, अगर यह मिज़ाज बन जाए तो उसके ज़रिये इंशाअल्लाह तक़्वे का भी मिज़ाज बनेगा।

हासिले बहस:

तक़्वे के मुख़्तलिफ़ दरजात का हुसूल एकबारगी मुमकिन नहीं, अलबत्ता जब आदमी मेहनत करता रहेगा तो एक ज़ीना, दूसरा ज़ीना और तीसरा ज़ीना करके आगे बढ़ता चला जाएगा, फिर क्या बईद है कि अल्लाह तआला उसको नयाबते अम्बिया अता फ़रमाए और औलिया किराम का वह मक़ाम अता फ़रमाए, जिन्होंने पूरी दुनिया को ईमान व यक़ीन से भर दिया और अल्लाह ने उनके ज़रिये से बड़ा काम लिया, लेकिन यह जब ही मुमकिन है जब आदमी इसके लिए तैयारी करे, शुरू से मेहनत करे, उसके अन्दर अज़्म हो, वह अपनी ख़ुद तरबियत करे, अपनी अच्छाइयों और बुराइयों और भलाइयों को देखे और सोचे और अगर ज़रा भी शुब्हा हो तो अपने बड़ों से पूछे और अगर बड़े किसी बारे में कह दें कि तुम्हारा यह काम ग़लत है तो चाहे उसका दिल यही कहता हो कि हम सही हैं, लेकिन उसको उस वक़्त यही फ़ैसला करना पड़ेगा कि हम ग़लत हैं, क्योंकि हमें अपने रहनुमा की बात मानना है, जब आदमी इसी तरह अपनी तरबियत करेगा तो यक़ीनन तक़्वे का मिज़ाज बनेगा।

निकाह के चन्द मसाएल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

निकाह में किफ़ाअतः

किफ़ाअत के लफ़्ज़ी माने मुमासलत (बराबरी) के होते हैं और शरीअत की इस्तलाह में किफ़ाअत का मतलब यह होता है कि जब औरत की शादी की जा रही हो तो चन्द उमूर में शौहर उसके बराबर का हो या उससे अफ़ज़ल हो। (शामीः 2/344)

जहां तक मर्द का ताल्लुक़ है तो उसकी शादी करते वक़्त लड़की का उसके मसावी होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि उससे कमतर या अफ़ज़ल भी हो सकती है, इसकी वजह बयान करते हुए फ़िक़्ही किताबों में लिखा हुआ है कि औरत को या उसके घरवालों को इससे तकलीफ़ हो सकती है कि वह किसी (दुनिया के तरफ़ के लिहाज़ से) घटिया का फ़राश बने, लेकिन मर्द फ़राश बनाता है, लिहाज़ा इसमें इस तरह की किसी बात का कोई अंदेशा नहीं है। (शामीः 2/344)

क्या इस्लाम में भी ऊंच–नीच का तसव्वुर है?

इस मसले में यह शुब्हा न किया जाए कि बाज़ मज़ाहिब मसलन हिन्दुओं की तरह इस्लाम में भी अदना–आला और ऊंच–नीच का तसव्वुर है? हाशा व कला! इस्लाम इस ऊंच–नीच के तसव्वुर से बहुत बुलन्द है, कुरआन मजीद में साफ़ ऐलान किया जा चुका है कि ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हें मुख़्तलिफ़ जमाअतों और क़बीलों में सिर्फ़ इस मक़सद से तक़सीम कर दिया कि तुम एक–दूसरे को पहचान सको, बेशक तुममें ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो तक़वा में सबसे बढ़ा हुआ हो। (सूरह हुजूरातः 13)

और नबी (स0अ0व0) से मरवी है कि आप ने अय्यामे तश्रीक के दरमियान लोगों को मुख़ातिब करके फ़रमायाः "लोगो! सुनो! तुम्हारा रब एक है, तुम्हारा बाप (यानि जद्दे अमजद हज़रत आदम अलैहिस्सलाम) एक है, सुनो! न तो किसी अरबी को किसी अजमी पर फ़ज़ीलत हासिल है, न किसी गोरे को काले पर, न काले को गोरे पर सिवाय इसके कि तक़वा हो।"

(मुसनद अहमदः 23489)

लिहाज़ा फ़ज़ीलत हरगिज़ उन कामों से हासिल नहीं हो सकती जिनको किफ़ाअत का मेयार क़रार दिया गया है, अलबत्ता शादी और इज़्दिवाजी ताल्लुक़ चन्द रोज़ नहीं बल्कि ज़िन्दगी भर के लिए होता है और जिन कामों का मेयार किफ़ाअत क़रार दिया गया है उनके न होने पर निकाह की पाएदारी पर हुरूफ़ आ सकता है, इसीलिए उनको निकाह की शर्त के तौर पर नहीं बल्कि औलिया और लड़की के हक़ के तौर पर किफ़ाअत का मेयार क़रार दिया गया है, इसलिए औलिया और घरवाले बेजोड़ रिश्ते पर राज़ी हों तो उनके दरमियान बिला तकल्लुफ़ रिश्ता हो सकता है, इसीलिए रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के अहद मुबारक में बेजोड़ शादियों की बहुत सी मिसालें मिल जाती हैं, बल्कि बाज़ फ़ुक़्हा के यहां तो क़िफ़ाअत का सिरे से एतबार ही नहीं है, इस तफ़सील से समझा जा सकता है कि इस्लाम में किफ़ाअत का ऐतबार हिन्दुओं के यहां ऊंच–नीच के ज़ालिमाना फ़लसफ़े से दूर–दूर से भी कोई वास्ता नहीं, हां बहुत से मुसलमानों में हिन्दुओं के ज़हरीले असरात से इस तरह के ग़ैर इस्लामी ख़्यालात ज़रूर पैदा हो गए हैं।

इस ज़रूरी तम्हीद के बाद हम उन चन्द उमूर को बयान करते हैं जिनमें अहनाफ़ के नज़दीक किफ़ाअत का एतबार किया जाता हैः

किफ़ाअत का एतबार किन चीज़ों में होगा?

फ़ुक़्हा–ए–अहनाफ़ के यहां मुन्दरजा ज़ेल चीज़ों में किफ़ाअत का एतबार किया जाएगाः

1. नसब
2. हुर्रियत
3. कुबूले इस्लाम में सबक़त
4. दीनदारी
5. मालदारी
6. पेशा

अब हम नीचे इन छः उमूर की मुख़्तसर वज़ाहत करते हैं:

नसब में किफ़ाअतः

फ़िक़्ही किताबों में सराहत से लिखा हुआ है कि नसब में किफ़ाअत का एतबार सिर्फ़ अरबी ख़ानदानों में किया जाएगा और बक़िया लोगों में नहीं किया जाएगा और फिर अरब ख़ानदानों में जितने ख़ानदानों का ताल्लुक़ क़ुरैश से है वह सब एक–दूसरे के कुफ़ू हैं, इस तरह अगर लड़की सैय्यद हो तो क़ुरैश के दूसरे ख़ानदान सिद्दीक़ी, फ़ारूक़ी और उस्मानी का लड़का उसका कुफ़ू क़रार दिया जाएगा, जहां तक दूसरे अरब क़बीलों का ताल्लुक़ है तो वह क़ुरैश के कुफ़ू नहीं है, लेकिन सब ही क़ुरैश को छोड़कर बक़िया क़बाएल के कुफ़ू हैं। (हिन्दियाः 1/29)

अजमी बिरादरियों में किफ़ाअत

ऊपर बयान किया गया कि ग़ैर अरब लोगों में नसब के एतबार से किफ़ाअत का कोई एतबार नहीं होगा, लेकिन किफ़ाअत का मसला चूंकि रिश्ता–ए–निकाह को पाएदार रखने के मक़सद से है, लिहाज़ा अगर उर्फ़ में अहले अजम भी जिन बिरादरियों को अपने बराबर का समझते हों, शरअन उनको बराबर का माना जाएगा और जिनको बराबर का न मानते हों, उनको कुफ़ू नहीं क़रार दिया जाएगा। (शामीः 2/349)

हुर्रियत में किफ़ाअतः

यह हुक्म उस वक़्त था जब कि ग़ुलामी पाई जाती थी, इसीलिए इसके मुताल्लिक़ किताबों में तफ़सीलात दर्ज हैं, लेकिन ज़ाहिर बात है कि अब ग़ुलामी दुनिया से ख़त्म हो चुकी है, लिहाज़ा उसकी तफ़सीलात बयान करने की अब कोई ज़रूरत नहीं है।

जदीदुल इस्लाम और क़दीमुल इस्लाम होने में किफ़ाअतः

किताबों में लिखा है कि नौ मुस्लिम शख़्स पहले से आबाई मुसलमान लड़की का कुफ़ू नहीं है और तफ़सीलात करते हुए बताया गया कि जिसकी दो पुश्तें मुसलमान हों वह क़दीमुलइस्लाम है, लिहाज़ा वह ऐसी लड़की का भी कुफ़ू माना जाएगा जिसकी इस्लाम पर कई पुश्तें गुज़र चुकी हों और जो शख़्स ख़ुद मुसलमान हो या जिसका बाप मुसलमान हो, दादा ग़ैरमुस्लिम था, तो यह शख़्स जदीदुलइस्लाम कहलाएगा और यह क़दीमुल इस्लाम ख़ातून का कुफ़ू नहीं हो सकता और यह तफ़सीलात वहां के लिए हैं जहां क़दीमुलइस्लाम और जदीदुल इस्लाम होने को शर्फ़ व इम्तियाज़ का मेयार बनाया जाता हो, जहां ऐसा न हो वहां उसको किफ़ाअत में शुमार नहीं किया जाएगा।

(शामीः 2/346, हिन्दियाः 1/290)

इसलिए हिन्दुस्तान के उलमा और मुफ़्तियाने किराम की इज्तिमाई तजवीज़ में हैः "कोई भी ग़ैर मुस्लिम इस्लाम क़ुबूल कर लेने के बाद मुस्लिम सोसाइटी का मुअज़्ज़ज़ फ़र्द बन जाता है, उसे पुश्तैनी मुसलमानों के बराबर हुक़ूक़ व एहतिराम हासिल हो जाता है, मुसलमान लड़कियों का निकाह अगर नौ मुस्लिम नवजवानों से किया जाए तो न सिर्फ़ यह कि जाएज़ होगा, बल्कि मोजिबे अज्र व सवाब है।"

(फ़िक़ एकेडमी के फ़ैसलेः 99–100)

दीनदारी और मालदारी में क़िफ़ाअतः

अगर लड़की दीनदार हो और लड़का शराबी, कबाबी, नमाज़ को छोड़ने वाला हो तो वह उस लड़की का कुफ़ू नहीं है और औलिया चाहें तो क़ाज़ी के यहां निकाह फ़स्ख़ करा सकते हैं। (हिन्दियाः 1/291)

जहां तक मालदारी में क़िफ़ाअत का ताल्लुक़ है तो इसका यह मतलब नहीं है कि लड़का मालदारी में लड़की के बराबर हो, बल्कि उसका मतलब सिर्फ़ यह है कि वह लड़की के मेहर और नफ़्क़े की अदायगी पर क़ादिर हो। (हिन्दियाः 1/291)

पेशा में किफ़ाअतः

शरीअत में पेशे के एतबार से ऊंच–नीच का कोई तसव्वुर नहीं है, इसलिए इसमें क़िफ़ाअत सिर्फ़ उसी सूरत में मोतबर होगी, जब लड़की दूसरे पेशे वालों के यहां रिश्ता होने को पसंद न करे, यानि इसका एतबार कुल्ली तौर पर उर्फ़ पर है। (शामीः 2/349)

अस्ल मसला उर्फ़ पर मुबनी हैः

"मसला–ए–किफ़ाअत में दीनदारी का एतबार तो ज़रूरी है, दीगर उमूर ऐसे हैं, जिनका ताल्लुक़ उर्फ़ व आदत और समाजी हालात से है, इसलिए पूरी दुनिया और तमाम मोमालिक और अक़वाम के लिए उमूरे किफ़ाअत का तअय्युन और तहदीद यकसां नहीं हो सकती, लिहाज़ा हर मुल्क व इलाक़े के उलमा व फ़ुक़्हा वहां के उर्फ़ व आदात और समाजी अहवाल के पेशेनज़र उमूरे किफ़ाअत की तहदीद व तअय्युन करेंगे, बग़ैर इसके कि किफ़ाअत को आपस में इज़्ज़त व ज़िल्लत व शराफ़त और ज़लालत के साथ जोड़ा जाए।

मुहब्बत की मुस्तहिक़ ज़ात

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

इन्सानों को सबसे बढ़कर मुहब्बत अल्लाह तआला से होना चाहिए, ऐसी मुहब्बत जो बन्दगी और इबादत की हद तक पहुंच जाए। इस तरह की मुहब्बत अल्लाह के अलावा किसी और के लिए जाएज़ नहीं है। इन्सान के दिल में यह मुहब्बत एहसान और कमाल की बुनियाद पर पैदा होती है। इसीलिए कुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने जगह–जगह पर अपनी कुदरत व रहमत की निशानियों का ज़िक्र किया है लेकिन लोगों को अपने ख़ुदसाख़्ता माबूद इतने पसंद आते हैं कि वह मुहब्बत में अल्लाहत तआला की जगह लेते हैं। अल्लाह की मुहब्बत कहीं पीछे चली जाती है। हालांकि खुद उनके बक़ौल यह माबूदाने बातिला अल्लाह से क़रीब होने का ज़रिया होते हैं फिर भी ज़राए अस्ल पर ग़ालिब आ जाते हैं और नौबत यहां तक पहुंच जाती है कि बराहेरास्त अल्लाह का तज़किरा भी उनको नागवार गुजरता है और माबूदाने बातिल के तज़किरे से उनकी बाछें खिल जाती हैं। कुरआन करीम ने कितनी सच्ची मंज़रकशी की है:

"जब एक अल्लाह का तज़किरा होता है तो उन लोगों के दिल सिकुड़ने लगते हैं जो आख़िरत पर ईमान नहीं रखते हैं और जब अल्लाह के अलावा और माबूदों का तज़किरा होता है तो वह ख़ुशी से खिल उठते हैं।"

अल्लाह से मुहब्बत उसकी उलूहियत, रुबूबियत, ख़ल्लाक़ियत, उसके फ़ज़्ल व कमाल, उसके एहकाम व एहसान का नतीजा होती है। वह बिज़्ज़ात महबूब है क्योंकि उसके अलावा कोई इस दर्जे मुहब्बत के क़ाबिल नहीं, लेकिन माबूदाने बातिला की मुहब्बत उनकी उलूहियत और रुबूबियत का सबब बनती है और फ़ीनफ़सियह मुहब्बत की कोई बुनियाद नहीं होती।

इससे यह बात समझ में आती है कि शिर्क की अस्ल वजह बेवजह मुहब्बत है। सबसे पहले इन्सान बेदलील एतक़ाद गढ़ता है फिर मुहब्बत में अंधा–बहरा होकर उसकी इबादत करता है, यह इबादत भी अल्लाह के कुर्ब के दावे पर होती है फिर यही मुहब्बत अल्लाह दूरी का ज़रिया बनती है, यहां तक कि अल्लाह का तज़किरा भी पसंद नहीं आता।

दुनिया की बहुत सारी क़ौमें ऐसी हैं जो फ़ायदा पहुंचाने वाली हर मख़लूक़ को जो दर हक़ीक़त अल्लाह के एहसान का एक नमूना होती है बराहेरास्त ख़ुदा का दर्जा दे डालती हैं। चांद–सूरज अल्लाह की मख़लूक़ है, आसमान–ज़मीन अल्लाह की पैदा की हुई हैं, बर्रो–बहर को जूद बख़्शने वाला अल्लाह है। दरख़्त पहाड़ सब अल्लाह के बनाए हुए हैं। इनमें मौजूद नफ़े की सलाहियत अहले बातिल के नज़दीक उनसे मुहब्बत फिर उनकी इबादत का ज़रिया बनती है। आगे इनके लिए कुछ मिसाली सूरतें तैयार की जाती हैं, इन सूरतों में सिरे से कोई नाफ़ेईयत नहीं होती, लेकिन उनसे ऐसी मुहब्बत की जाती है जो शायद नफ़ा पहुंचाने वाली अशिया से भी न की जाए, अल्लाह का मामला तो सबसे आख़िर में है, इसे कौन याद रखता है, इन तमाम मुहब्बतों की बुनियाद इन्सानी हिमाक़त व जाहिलियत है कि इन्सान मख़लूक़ और मस्नूअ तक रहता है, सानेअ और ख़ालिक़ तक नहीं पहुंच पाता, फिर इस मख़लूक़ और मस्नूअ की मिसाली सूरतों में अटक कर रह जाता है कि बस जहां कोई सूरत बन गई उसका दिमाग़ चल जाता है।

हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) उस क़ौम से ताल्लुक़ रखते थे जो सनम परस्ती की डसी हुई थी। वह ख़ूब जानते थे कि जब मूरतें और मुजस्समे वजूद में आते हैं तो इन्सान के दिमाग़ कितने ख़राब हो जाते

हैं, इसीलिए जब वह अपने और अपने औलाद के लिए शिर्क जैसी लानत व नहूसत से पनाह चाहते हैं तो ख़ासकर बुतों का तज़किरा करते हैं और यह फ़रमाते हैं कि एक परवरदिगार इन बुतों ने बहुत सारों को गुमराह कर दिया।

"उस वक़्त को याद रखो जब इब्राहीम ने कहाः परवरदिगार! इस शहर को अमन वाला बना दे, मुझे और मेरे बेटों को बुतों की इबादत से महफ़ूज़ रख। परवरदिगार! इन बुतों ने बहुत सारे इन्सानों को गुमराह किया है।"

शायद इसी वजह से इस उम्मते तौहीद के लिए जानदार की तस्वीर बनाना भी सख़्त तरीन हराम क़रार दिया गया हो। (वल्लाहु आलम)

यह बात वाज़ेह रहे कि अल्लाह ने फ़ितरी तौर पर इन्सान में मुहब्बत का जज़्बा रखा है, अपने मोहसिनीन और ताल्लुक़ रखने वालों से मुहब्बत एक फ़ितरी जज़्बा है, इस्लाम दीने फ़ितरत है, इसलिए ऐसी किसी मुहब्बत से वह मना नहीं करता, बल्कि वह हर इन्सान से मुहब्बत और उसके हक़ को अदा करने की बहुत ताकीद करता है, अलबत्ता आख़िरी दर्जे की मुहब्बत तन्हा अल्लाह के लिए ख़ास है। कुरआन मजीद में एक जगह वज़ाहत के साथ इरशाद हैः

"और लोगों में कुछ ऐसे हैं जो अल्लाह को छोड़कर मद्देमुक़ाबिल ठहराते हैं, उनसे वह ऐसी मुहब्बत करते हैं जैसे अल्लाह से मुहब्बत की जाती है, जो लोग ईमान वाले हैं, वह अल्लाह से बेपनाह मुहब्बत रखते हैं और अगर यह ज़ालिम उस वक़्त को देख लें जब यह अज़ाब को देखेंगे (जान जांएगे) कि तमाम कूव्वते अल्लाह की हैं और अल्लाह का अज़ाब निहायत सख़्त है।"

यह वह मुहब्बत है जो बन्दगी और ग़ुलामी तक पहुंचाती है और महबूब के लिए जान–माल, इज़्ज़त–आबरू, सबकुछ क़ुर्बान करने का हुक्म देती है। ऐसी मुहब्बत सिर्फ़ अल्लाह के लिए हो सकती है। इस मुहब्बत में किसी को शरीक करना जाएज़ नहीं है बल्कि शिर्क है। आयत में इरशाद है किः "जो लोग ईमान वाले है वह तो अल्लाह से बेपनाह मुहब्बत करते हैं।" यह जुम्ला ख़बर भी है और हुक्म भी। यानि ईमान वाले ऐसा करते हैं और उनको ऐसा ही करना चाहिए। अल्लाह से शदीद मुहब्बत की एक वजह यह भी है कि वह जानते हैं कि ख़ुद अल्लाह तआला भी उनसे मुहब्बत करता है।

माबूदाने बातिला बेजान पत्थर और बेहिस मूरतें किसी से क्या ख़ाक मुहब्बत करेंगी, माद्दी नुक़्ता–ए–निगाह से भी ग़ौर किया जाए तो यही बात सामने आती है कि मुहब्बत ताक़तवर हस्ती से करनी चाहिए जो ख़ुद ऐसा बूदा, फुसफुसा और कमज़ोर व बेजान क़िस्म का हो कि अपनी हिफ़ाज़त आप न कर सके तो उससे मुहब्बत करने से क्या हासिल। लेकिन बाज़ लोग उनसे अल्लाह से मुहब्बत करने की तरह मुहब्बत करते हैं यानि क़ल्ब व दिमाग, अक़्ल व फ़रासत के लिहाज़ से अंधे–बहरे हो जाते हैं, हालांकि सारी कूव्वते तन्हा अल्लाह तआला की हैं लिहाज़ा सारी मुहब्बतें भी उसी के लिए वक़्फ़ होनी चाहिए।

आयत के आख़िरी टुकड़े में इरशाद हैः "और अगर ज़ालिम उस वक़्त को देख लें जब वह अज़ाब का मुशाहिदा करेंगे तो उनकी समझ में ख़ूब आ जाएगा कि तमाम तर कूव्वत अल्लाह की है और उसी का अज़ाब सबसे बढ़कर सख़्त है।"

मालूम हुआ अभी अज़ाब का वक़्त नहीं आया है, इसीलिए ख़ुदा से बेज़ार लोग बग़ले बजा रहे हैं। जब अस्ल वक़्त आ जाएगा तक उनका कचूमर निकल जाएगा यानि अस्ल पूरा अज़ाब देखना भी ज़रूरी नहीं बल्कि जब अज़ाब का वक़्त आ जाए और यह अज़ाब की इब्तिदा भी देख लेंगे तो इनको एहसास होगा कि बाज़ी उनके हाथ से निकल चुकी है। ताक़त अल्लाह की है और ज़िल्लत आमेज़ अज़ाब उनका मुक़द्दर है।

यह कैफ़ियत मौत के वक़्त होगी या फिर क़यामत के दिन या जिस वक़्त अल्लाह हलाक़त का फैसला करे उस वक़्त भी हो सकती है।

माँ-बाप के साथ हुस्न-ए-सुलूक

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

इन्सान का सबसे मज़बूत और अनमोल रिश्ता अगर किसी से है तो वह उसके मां–बाप हैं, यह रिश्ता है मुहब्बत का, अक़ीदत का, एहतिराम का, तक़द्दुस का, अज़मत का, अल्लाह तआला का इरशाद है:

"और तुम्हारे परवरदिगार ने हुक्म दिया है कि उसके सिवा किसी की इबादत न करो और वालिदैन के साथ हुस्न–ए–सुलूक करो, अगर वालिदैन में से कोई एक या दोनों तुम्हारे पास बुढ़ापे को पहुंच जाएं तो उन्हें उफ़ तक न कहो और न उन्हें झिड़को, बल्कि उनसे इज़्ज़त के साथ बात किया करो और उनके साथ मुहब्बत का बर्ताव करते हुए उनके सामने अपने आप को इन्किसारी को झुकाव और यह दुआ करो या रब! जिस तरह उन्होंने मेरे बचपन में मुझे पाला है आप भी उनके साथ रहमत का मामला कीजिए।"

(अलइस्राः 23–24)

अल्लाह तबारक व तआला ने जिस तरह अपने साथ वालिदैन का तज़किरा फ़रमाया है, इससे यह बात मालूम हो जाती है कि वालिदैन की क्या अहमियत है? लेकिन अफ़सोस की बात है कि मां–बाप के साथ औलाद का जो सुलूक होना चाहिए, वह नहीं हो पाता, अल्लाह तआला का इरशाद है:

"और हमने इन्सान को अपने वालिदैन के बारे में ताकीद की है (क्योंकि) उसकी मां ने उसे कमज़ोरी पर कमज़ोरी बर्दाश्त करके पेट में रखा और दो साल में उसका दूध छूटता है कि तुम मेरा शुक्र अदा करो और अपने वालिदैन का शुक्रिया अदा करो और यह बात समझ लो कि लौट कर मेरे पास ही आना है।"

(लुक़मानः 14)

वालिदैन ही हैं जिन्होंने पूरी–पूरी रात जागकर औलाद की ख़्वाहिशों को पूरा किया, उसके आंसुओं को पोंछा, उसकी मामूली तकलीफ़ पर तड़प गए, बेचैन हो गए, वालिदैन ही हैं जो अपनी औलाद को अपने से ज़्यादा चाहते हैं, उस पर अपनी जान न्यौछावर करते हैं, ख़ुद भूखे रहते हैं ताकि उनके बेटे का पेट भर जाए, ख़ुद जागते हैं ताकि वह आराम से सो जाए, ख़ुद थकते हैं ताकि वह आराम से रह सके, वह मुहब्बत करते हैं लेकिन बेटा नफ़रत करता है, वह इज़्ज़त के साथ रखते हैं लेकिन यह अहानत व तज़लील का मामला करता है, जब यह घर से निकलता है तो वह बेचैन रहते हैं कि ख़ैरियत से घर वापस आ जाए, परेशान रहते हैं ताकि उसको सफ़र में किसी भी तरह की कोई तकलीफ़ या परेशानी न हो, एक पल के लिए चैन से नहीं बैठ पाते, हर वक़्त ख़बर लेते रहते हैं, दुआएं करते हैं, हर आने–जाने वाले से उसकी ख़ैरियत पूछते हैं, लेकिन जब यही औलाद घर वापस आती है तो बजाए इसके कि वह मां–बाप के पास जाकर दुआएं ले, उनके पास जाकर उनकी ख़ैरियत पूछे, वह घुसते ही अपनी मां से बदतमीज़ी से बात करता है, उसकी आवाज़ में सख़्ती होती है, लहजे में कड़वाहट होती है, नर्मी के बजाए सख़्ती होती है, मुहब्बत के बजाए नफ़रत झलकती है।

यह दो मुतज़ाद रवैये हैं, एक रवैया वालिदैन का है कुर्बानियों से भरा, शफ़क़तों से भरा, जबकि दूसरा रवैया औलाद का है सख़्ती का, बेरहमी का, बदअख़लाक़ी का, बदतमीज़ी का, बेअदबी का, अक्सर यह चीज़ें वहां देखने को मिलती है जहां फ़र्क़ है मां–बाप और औलाद के दरमियान, चाहे वह फ़र्क़ माली हो या इल्मी, अगर औलाद साहिबे इल्म है,

उसका एक मक़ाम है, उसकी लोग इज़्ज़त करते हैं, जहां जाता है इल्मी मजलिसे होती हैं, लोग उसके सामने अदब से बैठते हैं तो उसको अपने वालिदैन से मिलने या उनकी ख़िदमतक रने में शर्म महसूस होती है। अगर औलाद मालदार है तो उसको अपने मां–बाप की ख़िदमत करने में आर महसूस होती है, वह अपना तारुफ़ कराते हुए शर्माता है, उसको यह एहसास होने लगता है कि अगर उसने अपने बाप का तारुफ़ करा दिया तो लोग क्या कहेंगे, एहसासे कमतरी का वह शिकार हो जाता है, जबकि दूसरी तरफ़ उसके मां–बाप उसकी ज़बान से डरते हैं, उसके सामने बात करने से बात करने से उनको डर होता है, उसके सामने बात करने में उनको डर होता है, दोस्तो के सामने अपने बच्चों से कुछ कह नहीं सकते कि कहीं बदतमीज़ी न करे या सख़्त लहजे में बात न करे, तरह–तरह के ख़दशात होते हैं, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

"क़यामत की निशानियों में यह भी है कि जब मर्द बीवी की इताअत करने लग जाए और मां की नाफ़रमानी करने लगे और जब दोस्त को क़रीब किया जाने लगे और बाप को दूर किया जाने लगे।" (सुनन तिरमिज़ी)

एक दूसरी जगह हदीस में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः "मलऊन है वह शख़्स जिसने अपने वालिदैन के साथ ज़्यादती की।" (मीज़ानुल एतदाल)

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने माओं की नाफ़रमानी और उनके साथ बदसुलूकी करने से सख़्त मुल्नब्बेह किया है, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का इरशाद हैः

"अल्लाह तआला ने तुम पर माओं की नाफ़रमानी को हराम क़रार दिया है।" (मुत्तफ़िक़ अलैह)

औलाद को किसी तरह भी तरक़्क़ी मिलती है तो उसके वालिदैन को सबसे ज़्यादा ख़ुशी मिलती है, हर शख़्स मफ़ाद से जुड़ा होता है लेकिन वालिदैन बिना किसी मफ़ाद और ग़रज़ के औलाद से जुड़े रहते हैं। कितना एहसास होता होगा उन लोगों को जिनके वालिदैन इस दुनिया में नहीं है। जो वालिदैन की शफ़क़तों और उनकी मुहब्बतों से महरूम हेा चुके हैं। अब उनको एक–एक करके सब याद आता होगा, उनकी मुश्फ़िक़ाना डांट, उनकी मुहिब्बाना तवज्जोहात, उनका बातें करना, उनका ताल्लुक़ का इज़हार करना, वालिदैन के इन्तिक़ाल के बाद सब ख़त्म हो जाता है, अब वह किसके पास जाएगा, किसके पास बैठेगा, किस के सामने अपने दुख–दर्द का इज़हार करेगा, किसकी गोद में सर रखकर रोएगा, किससे मशवरे करेगा, एक–एक करके उसको उनकी बातें याद आती हैं लेकिन अब तो वह जा चुके हैं। उसको अफ़सोस होगा कि ज बवह मौजूद थे उसने उनकी क़द्र नहीं की, उनकी फ़िक्र नहीं की, उनके साथ हुस्ने सुलूक नहीं किया।

वालिदैन की ज़िन्दगी में ही क़द्र होनी चाहिए, उनको वक़्त देना चाहिए, उनके साथ अपने जज़्बात का इज़हार करना चाहिए, उनके साथ हुस्ने सुलूक करना चाहिए, उनके साथ तवाज़ो व व इन्किसारी से पेश आना चाहिए, आवाज़ में नर्मी होनी चाहिए, ज़बान में मिठास होनी चाहिए, उनको यह एहसास हो कि मेरी औलाद मेरे साथ हुस्ने सुलूक करती है, अपनी औलाद का ख़्याल आते ही उनको फ़रहत व शादमानी हो, वह औलाद के पास हों तो उनके लगे कि सारी नेमतें उनको मिल गयी, उनके साथ बेअदबी व बेतौक़ीरी हो, ख़ास कर उम्र की इस मंज़िल में ज बवह पहुंच जाएं, हज़रत आयशा (रज़ि0) से एक हदीस मरवी है कि एक सहाबी रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के पास आए और उनके साथ एक बूढ़े शख़्स थे, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने उनसे पूछाः यह साहब कौन हैं? उन सहाबी ने जवाब दियाः मेरे बाप, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने उनसे फ़रमायाः

"उनके आगे मत चलना, मजलिस में उनसे पहले मत बैठना, उनका नाम लेकर न पुकारना, उनकी बेइज़्ज़ती का सबब न बनना।"

"मौलाना (रह0) का तर्ज़े तदरीस फ़ितरी और वजदानी था, वह ख़ुद लुत्फ़न्दोज़ होते और उनकी लुत्फ़न्दोज़ी और वजदारी एहतिज़ाज़ का असर ग़ैर मरई तौर पर तलबा पर पड़ा करता।"

(मौलाना अब्दुल्लाह अब्बास नदवी रह0)

बीस साल की उम्र में जब हज़रत मौलाना अली मिया नदवी (रह0) की बाज़ाब्ता मुनज़्ज़म तालीम की मुद्दत ख़त्म हुई और गुलिस्ताने इल्म की ख़ोशाचीनी की सलाहियत पैदा हो गई तो आप दारुल उलूम नदवतुल उलमा से बहैसियत मुदर्रिस वाबस्ता हो गए। पन्द्रह जुलाई 1934ई0 के जलसा–ए–इन्तिज़ामी में मौलाना मसऊद अली साहब ने मौलाना की तक़र्रुरी की तजवीज़ रखी जो अल्लामा सैयद सुलेमान नदवी व दीगर अराकीन के इत्तिफ़ाक़ राय से अल्हम्दुलिल्लाह मंज़ूर हुई और एक अगस्त 1934ई0 को बहैसियते उस्ताद तफ़सीर व अदब नदवा में आपका तक़र्रुर हो गया। नदवा की आज़दाना फ़िज़ा में और यहां के माहौल से फ़िक्री व इल्मी हमआहंगी के सबब हज़रत मौलाना को अपनी सलाहियतें बरोएकार लाने और उनको तरक़्क़ी देने के मवाक़ेअ ख़ूब फ़राहम हुए, आप लिखते हैं: "यहां तालीम व तदरीस का फ़र्ज़ अंजाम देने, तलबा से क़रीबी राब्ता रखने और अगर कभी ज़हन में आए तो कोई नया तालीमी तर्जुबा करने बल्कि निसाब के बारे में भी हक़ीर मारूज़ात पेश करने और मशविरा देने में कोई इन्तिज़ामी वक़्त और दफ़्तरी और हाकिमाना रुकावट हाएल नहीं थी।" (कारवाने ज़िन्दगी: 1/145)

इब्तिदा में आपको मुतवस्सित और बाज़ आली दरजात में तदरीस के लिए अहम किताबें तफ़वीज़ की गईं, कुरआन, तारीख़ और अरबी अदब हज़रत मौलाना का एख़्तिसासी मौज़ूअ था, इसलिए ज़्यादा मुद्दते तदरीस उसी दश्त की सैय्याही में गुज़री, अवलन आपने कुरआन मजीद के इब्तिदाई दस पारे ख़िज़री की तारीखुल उमम अलइस्लामिया का पहला हिस्सा और हमासा का "बाबुल अलद वन्नसीब वलमरासी" नीज़ अहमद हसन ज़ियाद की तारीखुल अदब अलअरबी पढ़ाई और इब्तिदाई दरजात में अलक़िरातुर्राशदा या कामिल कैलानी की हिकायातुल अत्फ़ाल का कोई हिस्सा भी पढ़ाया जो उस वक़्त दारुल उलूम नदवतुल उलमा के निसाब में दाख़िल था। अलावा अज़ीं किसी दर्जे में मन्तिक़ भी एक मुन्फ़रिद उस्लूब में पढ़ाई, आप रक़म तराज़ हैं:

"जदीद व क़दीम मन्तिक़ी इस्तेलाहात व उसूल (मसलनः दलालते मुताबिक़ी दलालते तज़म्मुनी और दलालते इल्तिज़ामी) की मिसालें रोज़मर्रा की चीज़ों और मुशाहदात से देता था, इसमें डिप्टी मौलवी नज़ीर अहमद साहब की किताब "मुबादिल हिक्मह" से मदद और रहनुमाई मिली।" (कारवाने ज़िन्दगी: 1/151–152)

इन अहम मुफ़व्वज़ा कुतुब की तदरीस के अलावा अपने इब्तिदाई ज़माने में हज़रत मौलाना ने हदीस की उम्मेहाते कुतुब में से सुनन तिरमिज़ी का निस्फ़ सानी बख़ूबी पढ़ाया, फिर दारुल उलूम से तदरीसी ताल्लुक़ के आख़िरी सालों में सही बुख़ारी के बाज़ अबवाब (मसलन किताबुल वही, किताबुल ईमान और किताबुल इल्म) भी बड़ी दिलजमई व दिलचस्पी के साथ पढ़ाए। नीज़ एक मुख़्तसर अर्से तक हुज्जतुल लाहुल बालिग़ा भी पढ़ाई।

कुरआन मजीद का वह हिस्सा जो आपको सुपुर्दे तदरीस किय गया था ज़्यादातर एहकाम व कलामी व फ़िक़्ही मुबाहिस पर मुजतमिल था। हज़रत मौलाना इन आयात की तदरीस के लिए अनथक मेहनत व मुताला करते, आप फ़रमाते हैं: "कशाफ़, मुआलिमुल तन्ज़ील बग़वी व मदारिक तक़रीबन लफ़्ज़न–लफ़्ज़न पढ़ीं।"

(कारवाने ज़िन्दगी: 1/147)

क़दीम तफ़सीरों के अलावा जदीद तफ़सीरों में "तफ़सीरुल मनार" और मौलाना आज़ाद की "तरजुमानुल कुरआन" से भरपूर इस्तिफ़ादह किया, तरजुमा कुरआन के सिलसिले में हज़रत शाह अब्दुल क़ादिर देहलवी (रह0) के तरजुमा कुरआन से मदद ली और तलबा के सवालात के जवाब में अल्लामा आलूसी की "रूहुल मआनी" बतौर ख़ास ज़ेरे मुताला रही नीज़ जदीद मालूमात और तक़ाबुली मुताला के सिलसिले में मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह0) से इस्तिफ़ादह जारी रखा।

हज़रत मौलाना (रह0) दौराने दर्स आयात की तिलावत के बाद तरजुमा कराते और अगर किसी आयत की नहवी तरकीब तलबा के फ़हम से बुलन्द होती तो बता देते, इसी तरह अगर किसी मुश्किल लफ़्ज़ की तश्रीह ज़रूरी मालूम होती या किसी कुरआनी लफ़्ज़ का कोई ख़ास पसमंज़र होता तो उसी क़द्र बयान करते जो मुफ़ीद मतलब हो, लेकिन इसमें भी मुद्दइयाना लहजा न

अख़्तियार फ़रमाते बल्कि जिस मुफ़स्सिर की बात नक़ल करते तो हवाले के साथ करते, इसके अलावा उनका सारा ज़ोर बक़ौल मौलाना अब्दुल्लाह अब्बास नदवी (रह0) उन हक़ाएक़ पर होता थाः

"मामूली तश्रीहात के अलावा जिस पर ज़ोर देते वह क़ुरआन करीम का दाएमी पैग़ाम है जो हर ज़माना' हर जगह के लिए है और आज भी इस दर्जे ताज़ा है और हालात के मुताबिक़ है जिस तरह नुज़ूल के वक़्त था और जो वाक़्यात उममे साबिक़ा और अम्बियाए साबिक़ीन के यहां बयान किये गये हैं, वह तस्वीर है इन्सानी अक़्ल के मुआरिज़ा की जो अम्बिया–ए–किराम की दावत के मुक़ाबले में हमेशा सामने आता रहा है और जब भी वह दावत अपनी सही रूह के साथ पेश की जाएगी' वही सूरत पेश आएगी।" (मीरे कारवांः 116)

हज़रत मौलाना (रह0) के क़ुरआन मजीद के तर्ज़े तदरीस में हज़रत शाह वलीउल्लाह देहलवी (रह0) का रंग साफ़ नज़र आता है जिनकी नज़र क़ुरआन की उमूमी तज़कीर, इसरार व हुक्म और आफ़ाक़ी दावत पर थी, इसका नतीजा था कि तलबा के दिल व दिमाग़ में क़ुरआन मजीद की अज़मत, उसका जलाल व जमाल और उसकी आफ़ाक़ियत व हमागीरी ग़ैर मरई तौर पर नक़्श हो जाती थी।

हज़रत मौलाना (रह0) नदवे की आज़दाना फ़िज़ा में रिवायती तर्ज़े तदरीस के बजाए इज्तिहाद से काम लेते थे, इसीलिए आपने क़ुरआन मजीद की बेहतरीन तफ़हीम व तश्रीह का एक तरीक़ा भी अख़्तियार किया कि जब तलबा की ज़हनी इस्तेदाद पुख़्ता हो गई तो उन्होंने बराहे रास्त तर्जुमा व तफ़सीर पढ़ाने के बजाए मज़ामीने क़ुरआन से रोशनास कराने का सिलसिला शुरू किया और मुख़्तलिफ़ मौज़ूआत (मसलनः तौहीद, रिसालत और आख़िरत वग़ैरह) पर क़ुरआनी आयात जमा करके बेशक़ीमत मुहाज़िरे दिये जिनसे फ़िक्र की नई राहें खुलीं।

जिस ज़माने में हज़रत मौलाना ने नदवा की की वादी–ए–तदरीस में क़दम रखा, उस वक़्त अरबी ज़बान व अदब, इंशा व ख़िताबत का ज़ौक़ आम था, नीज़ आलमे इस्लाम के मुतअद्दिद मशहूर व मेयारी अरबी रसाएल भी नदवे की फ़िज़ा में ग़ैरमानूस नाम नहीं थे, हज़रत मौलाना (रह0) ज़हनी नशोनुमा भी उसी बाज़ोक़ माहौल में हुई थी और उनके नज़दीक अरबी ज़बान की तालीम उसी तरीक़े के मुताबिक़ मुफीद थी जो तरीक़ा उनके शेख़ उस्ताद तक़ीउद्दीन हिलाली का था, वह ज़बान की तालीम में किसी दूसरी ज़बान से मदद लेना उसूलन ग़लत समझते थे, हज़रत मौलाना (रह0) ने भी बराहे रास्त अरबी ज़बान की तालीम को नदवे में ख़ूब रिवाज दिया और उसका फ़ायदा यह हुआ कि अरबी ज़बान में तलाक़त व रवानी हासिल हुई और अरबी तहरीर व तक़रीर में तलबा व असातिज़ा यकसां तौर पर कहिना मश्क़ हो गए, कारवाने ज़िन्दगी में हज़रत मौलाना (रह0) अपने अरबी अदब के तर्ज़े तदरीस के मुताल्लिक़ ख़ुद लिखते हैंः

"ज़वाबित व क़वाएद' नपे–तुले वक़्त और मक़ाम की कोई क़ैद न थी, तलबा को हर तरह मश्क़ कराने और अरबी सिखाने का एहतिमाम रहता था और इसके लिए हमलोग नए–नए तरीक़े अख़्तियार करते थे और ज़हनी उपज से काम लेते थे।" (कारवाने ज़िन्दगीः 1/151)

अरबी ज़बान व अदब में भी हज़रत मौलाना (रह0) का तर्ज़े तदरीस मुनफ़रिद और इज्तिहादी था, जो अज़ दिलखेज़ बरदिलरेज़ का मिस्दाक़ था, हज़रत मौलाना (रह0) किसी किताब की तदरीस में महज़ मुसन्निफ़ की इबारत के मुक़ल्लिद न थे, बल्कि उससे मुताल्लिक़ जो जदीद मालूमात होतीं उनको भी बयान करते और उदबा के असालीब का बाहमी फ़र्क़ भी बड़ी शरह व बस्त से बयान फ़रमाते, इसी तरह किसी अरबी लफ़्ज़ की तश्रीह में उसकी तारीख़ या नस्बनामा न बताते बल्कि उसके अदबी मुहासिन को अच्छी तरह दिलनशीं कर देते थे, मौलाना अब्दुल्लाह अब्बास नदव (रह0) की शहादत हैः

"मौलाना का तर्ज़ यह था कि जो इबारत सामने आ गयी उसके अन्दर अरबियत की जो रूह होती उसको इस तरह उजागर करते कि पहले उसको एक बार ख़ुद दोहराते जैसे कि मिस्री की डली मुंह में पड़ी है और काम व दहन उसकी शीरीनी से हिस्सी तौर पर लुत्फ़ंदोज़ हो रहे हों।" (मीरे कारवांः 104)

वाक़्या यह है कि हज़रत मौलाना (रह0) ने इन्तिहाई दिलसोज़ी व जांफ़िशानी के साथ तदरीस की ख़िदमत अंजाम दी और तलबा की अख़लाक़ी व दीनी इस्लाह व तरक़्क़ी की कामयाब कोशिशें कीं, तदरीस से मौलाना के इश्तिग़ाल और दिलचस्पी की मुंह बोलती तस्वीर उन्हीं के अल्फ़ाज़ नज़रे क़ारईन हैंः

"ज़हीन और ज़ीइस्तेदाद और सआदतमंद तलबा से ऐसा ताल्लुक़ पैदा हो जाता था और उनके पढ़ने–पढ़ाने में ऐसी क़ल्बी मसर्रत और रूहानी ताक़त महसूस होती थी कि बड़ी तातीलात के आने पर बजाए ख़ुशी के रंज व फ़िक्र पैदा होती थी और उनकी जुदाई का सदमा और तवील ख़ला का एहसास तकलीफ़ देता था।"

साज़िशों की कामयाबी की वजहें

जस्टिस मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी

"मेरा ज़ाति ईमान यह है कि ग़ैर मुस्लिमों की साज़िशें उम्मते मुस्लिमा को नुक़सान पहुंचाने के लिए कभी भी उस वक़्त तक बारावर नहीं हो सकतीं जब तक ख़ुद उम्मते मुस्लिमा के अन्दर कोई ख़ामी या नुक़्स मौजूद न हो, बैरूनी साज़िशें हमेशा उस वक़्त कामयाब होती हैं और हमेशा उस वक़्त तबाही का सबब बनती हैं जब हमारे अन्दर कोई नुक़्स आ जाए, वरना हुज़ूरे अक़दस (स0अ0व0) से लेकर आजतक कोई दौर साज़िशों से ख़ाली नहीं रहा, लिहाज़ा यह साज़िश न कभी ख़त्म हुई है और न कभी ख़त्म हो सकती है, यह तवक़्क़ो रखना कि साज़िशें बन्द हो जाएंगी, ख़ुदफ़रेबी है।

सोचने की बात यह है कि वह नुक़्स और ख़राबी और ख़ामी क्या है, जिसकी वजह से वह साज़िशें हमारे बीच कामयाब हो रही हैं? यह सोचने की ज़रूरत इसलिए है कि आज जब हम अपनी ज़बूंहाली का तज़किरा करते हैं तो आम तौर पर हम सारा इल्ज़ाम और सारी ज़िम्मेदारी उन साज़िशों पर डालते हैं कि यह फ़लां की साज़िश से हो रहा है, यह फ़लां का बोया हुआ बीज है और ख़ुद फ़ारिग़ होकर बैठ जाते हैं, हालांकि सोचने की बात यह है कि ख़ुद हमारे अन्दर क्या ख़राबियां और क्या ख़ामियां हैं? इस सिलसिले में दो बुनियादी चीज़ों की तरफ़ तवज्जो दिलाना चाहता हूं:

इसका पहला बड़ा अहम सबब मेरी नज़र में यह है कि हमने इज्तिमा को दुरुस्त करने की फ़िक्र में फ़र्द को खो दिया है और इस फ़िक्र में कि हम पूरे मुआशरे की इस्लाह करेंगे, फ़र्द की इस्लाह को भूल गए हैं और फ़र्द को भूलने के माने यह हैं कि फ़र्द को मुसलमान बनने के लिए जिन तक़ाज़ों की ज़रूरत थी, जिसमें इबादतें भी दाख़िल हैं, जिसमें अल्लाह से ताल्लुक़ भी दाख़िल है, जिसमें अख़लाक़ का तज़किया भी दाख़िल है और जिसमें सारी तालीमात पर अमल भी दाख़िल है, वह सब पीछे जा चुके हैं, लिहाज़ा जब तक हम उसकी तरफ़ लौटकर नहीं आएंगे, उस वक़्त तक यह तहरीकें और हमारी यह सारी कोशिशें कामयाब नहीं हो सकतीं। आज हमारी तवज्जो सियासत की तरफ़ भी है, मईशत की तरफ़ भी है, मुआशरत की तरफ़ भी है, लेकिन फ़र्द की तामीर के लिए और फ़र्द की इस्लाह के लिए इदारे नायाब हैं, इल्ला माशाअल्लाह, इसी वजह से आज हमारी तहरीकें कामयाब नहीं हो रही हैं, किसी न किसी मरहले पर जाकर नाकाम हो जाती हैं।

दूसरा सबब मेरी नज़र में यह है कि इस्लाम के ततबीक़ी पहलुओं पर हमारा काम या मफ़कूद है या कम से कम नाकाफ़ी है, इससे मेरी मुराद यह है कि एक तरफ़ तो हमने इज्तिमाइयत पर अपना ज़ोर दिया कि अमलन उसको इस्लाम का कुल क़रार दिया और दूसरी तरफ़ इस पहलू पर कमाहक़ा ग़ौर नहीं किया कि आज के दौर में इसकी ततबीक़ का तरीक़ा क्या होगा? इस सिलसिले में न तो हमने कमाहक़ा ग़ौर किया और न इसके लिए कोई मुन्ज़ब्त लाइहा–ए–अमल तैयार किया और अगर कोई लाइहा–ए–अमल तैयार किया तो वह नाकाफ़ी था, मैं यह नहीं कहता कि ख़ुदा न करे इस्लाम इस दौर में क़ाबिले अमल नहीं है, इस्लाम की तालीमात किस बश्री ज़हन की पैदावार नहीं, यह उस मालिकुल मुल्क वल मलकूत के एहकाम हैं, जिसके अमल व कुदरत से ज़मान व मकान का कोई हिस्सा ख़ारिज नहीं, लिहाज़ा जो शख़्स इस दौर में इस्लाम को नाक़ाबिले अमल क़रार दे, वह दाएरा–ए–इस्लाम में नहीं रह सकता, ज़ाहिर है कि इस्लाम को इस दौर में बरपा और नाफ़िज़ करने के लिए कोई तरीक़ेकार अख़्तियार करना होगा, इस तरीक़ेकार के बारे में संजीदा तहक़ीक़ और हक़ीक़त पसंदाना ग़ौर व फ़िक्र और तहक़ीक़ की कमी है। ●(इस्लाही ख़ुत्बात: 6/257–269)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 02 | February 2023 | Volume: 15

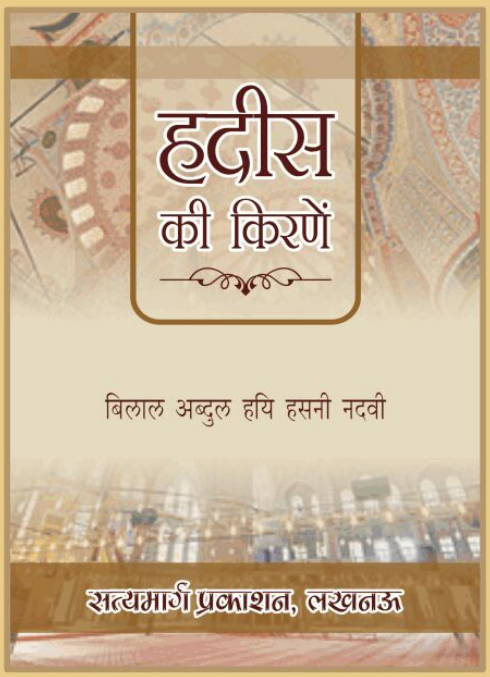

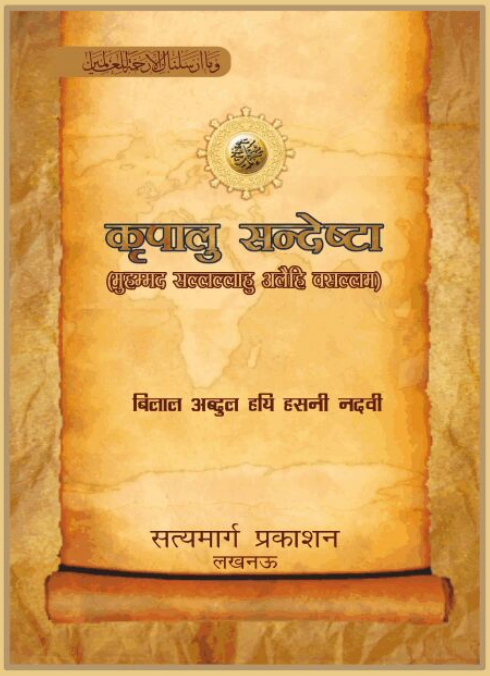

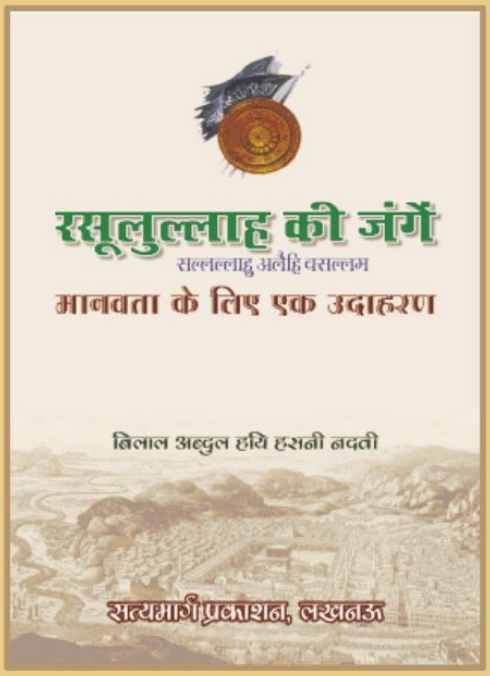

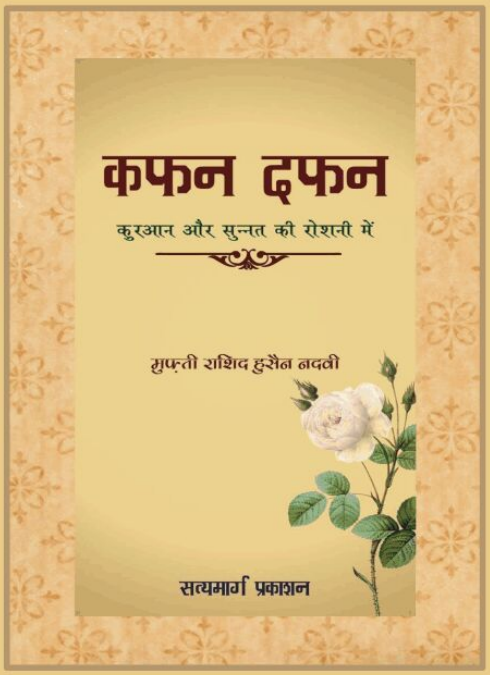

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.